ISSN : 0373-1200

सितम्बर 2003

मूल्य : 9.0

डॉ० रमेश दत्त शर्मा सम्मान विशेषांक
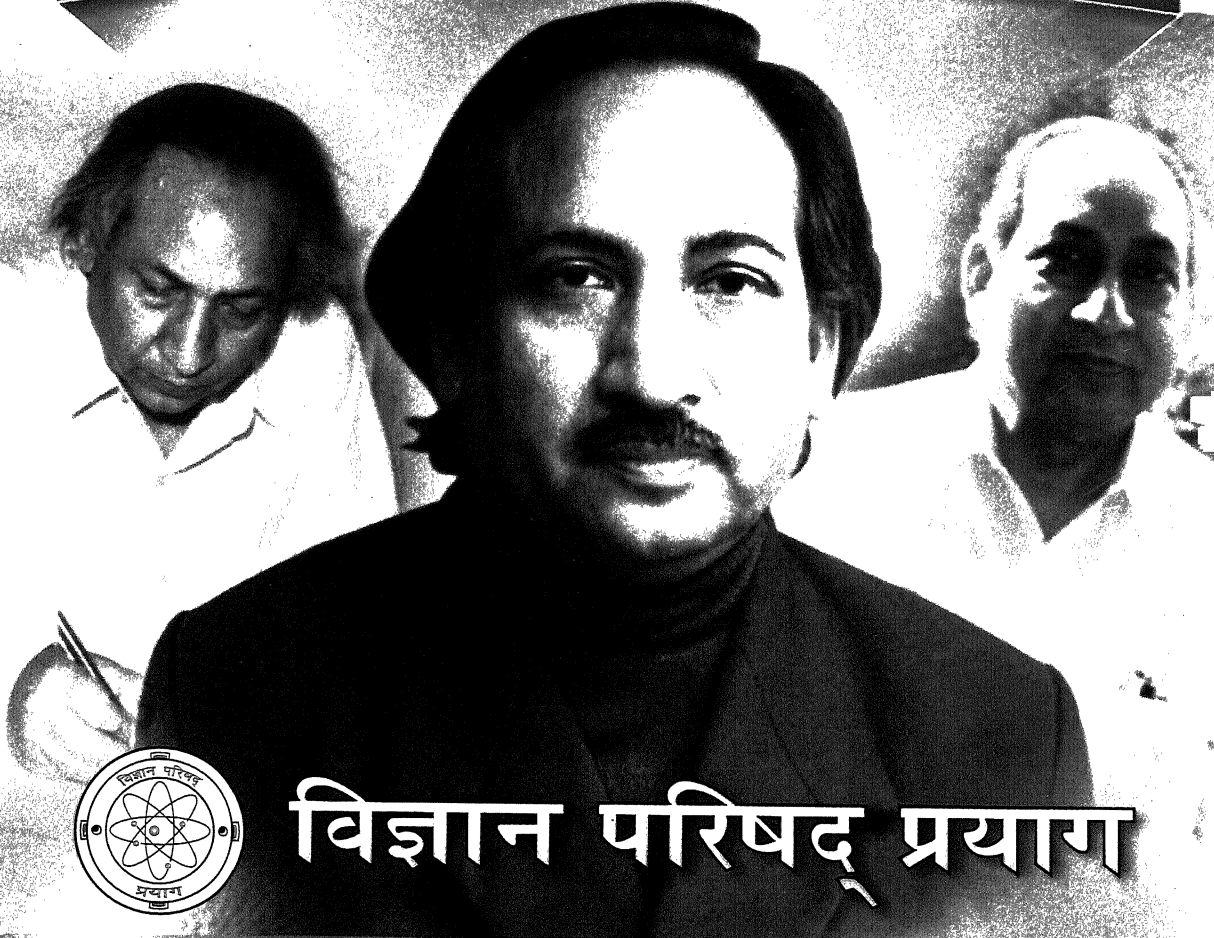
विज्ञान परिषद् प्रयाग

सी. एस. आई. आर. तथा डी. बी. टी. नई दिल्ली के आंशिक अनुदान द्वारा प्रकाशित

बलवंत राजपूत कालेज आगरा में बैडमिंटन चैम्पियन रमेश दत्त शर्मा (1959)

नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ० नार्मन बोरलाग के साथ डॉ० शर्मा (1996)

अंतर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान मनीला में विजिटिंग एडिटर डॉ० शर्मा : एक फिलीपीनी किसान के खेत पर (1987)
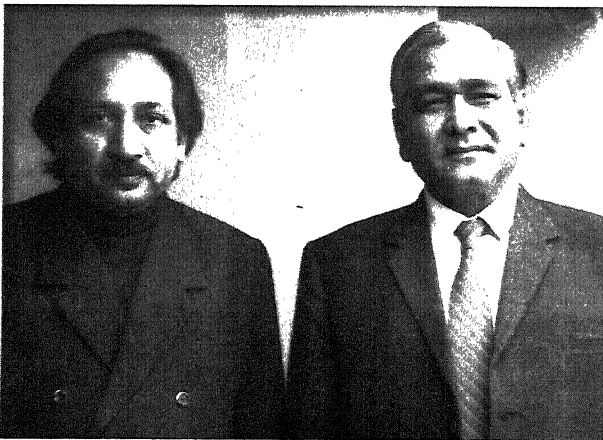
विज्ञान लेखक और अभिन्न मित्र डॉ० हरीश अग्रवाल के साथ डॉ० शर्मा

विज्ञान

परिषद् की स्थापना : 10 मार्च 1913
विज्ञान का प्रकाशन : अप्रैल 1915
वर्ष : 89 अंक : 6
सितंबर 2003

मूल्य
दसवार्षिक : 1,000 रुपये
त्रिवार्षिक : 300 रुपये
वार्षिक : 100 रुपये
यह प्रति : 9.00 रुपये

सभापति
डॉ॰ एम॰ जी॰ के॰ मेनन

सम्पादक, मुद्रक एवं प्रकाशक
डॉ॰ शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग

विज्ञान परिषद् प्रयाग के लिए
आन्तरिक सज्जा, टाइप सेटिंग तथा मुद्रण
इण्डियन ऑफसेट प्रिन्टर्स
केला भवन
136 विवेकानन्द मार्ग, इलाहाबाद
फोन : 2402859 मोबाइल : 9415267760

आवरण
चन्द्रा आर्ट्स
तालाब नवलराय, इलाहाबाद, फोनः 2558001

सम्पर्क
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद -211002
फोन : 2460001 ई-मेल : vigyanl@sancharnet.in
वेबसाइट : www.webvigyan.com

विषय-सूची

अतिथि सम्पादक : श्री तुरशान पाल पाठक
(डा॰ रमेश दत्त शर्मा सम्मान अंक)

डॉ॰ रमेश दत्त शर्मा

संक्षिप्त परिचय

15 फरवरी 1939 को जलेसर (एटा) उत्तर प्रदेश में जन्म। पिता पं. रविदास शास्त्री अपने क्षेत्र के जाने-माने वैद्य और समाजसेवी जिनसे रमेश जी को साहित्यिक संस्कार मिले। कविवर बच्चन जी की सलाह पर कविता छोड़कर विज्ञान पत्रकारिता शुरू की। राजा बलवंत सिंह कालेज, आगरा से वनस्पति विज्ञान में एम.एस-सी. तथा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर से डाक्टरेट। सर्वप्रथम 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' (10 फरवरी 1963) तथा 'धर्मयुग' (9 जून 1963) में वैज्ञानिक रचनाएँ प्रकाशित। शीर्षस्थ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लगभग 1000 रचनाएँ। आकाशवाणी और दूरदर्शन पर लगभग 500 कार्यक्रम। जीवविज्ञान, वनस्पति विज्ञान, चिकित्सा और कृषि तथा पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सारगर्भित परन्तु रोचक ललित विज्ञान लेखन की साहित्यक शैली विकसित करके इन विषयों का विशाल पाठक वर्ग तैयार किया। लगभग चार वैज्ञानिक पत्रिकाएँ सम्पादित कीं।

9 वर्ष तक वैज्ञानिक शब्दावली आयोग में वनस्पति विज्ञान संबंधी शब्दावली और मानक ग्रंथों के अनुवाद के बाद पंतनगर के कृषि विश्वविद्यालय में सह-निदेशक के पद पर काम किया और प्रकाशन तथा अनुवाद निदेशालय की नींव रखी। जुलाई 1970 से फरवरी 1999 तक भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् में सम्पादक, प्रधान सम्पादक तथा अंत में प्रकाशन निदेशक के पद पर कार्य किया। हिन्दी में 'फल-फूल' और 'कृषि चयनिका' तथा अंग्रेजी में 'आई.सी.ए.आर. न्यूज' तथा आई.सी.ए.आर.रिपोर्टर' पत्रिकाएँ शुरू कीं। कृषि में मौलिक लेखन के लिए डॉ. राजेन्द्र पुरस्कार शुरू कराया। विश्वविद्यालय संगठन तथा खाद्य एवं कृषि संगठन के लिए हिन्दी में फीचर लिखे। ब्रिटिश हाई कमीशन को हिन्दी में 'ब्रिटिश समीक्षा' के प्रकाशन के लिए प्रेरित किया। हिन्दी में विज्ञान् पत्रकारिता की प्रशिक्षण गोष्ठियाँ आयोजित कीं। रेडियो पर पुरस्कृत विज्ञान-रूपक और दूरर्दशन पर वैज्ञानिक वृत्तचित्र तथा कृषि-समाचार और कृषि दर्शन के जाने माने आलेख-लेखक और प्रस्तुतकर्ता।

हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की अभिवृद्धि के लिए डॉ. आत्माराम पुरस्कार; संचार माध्यमों में विज्ञान प्रसार के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित। विज्ञान परिषद् द्वारा डॉ. गोरख प्रसाद पुरस्कार, विज्ञान वैचारिकी अकादमी तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा विज्ञान वाचस्पति की उपाधियाँ। सोसायटी फॉर इनफार्मेशन साइंस के मानद फेलो। दिल्ली हिन्दी अकादमी ने 'धान कथा' तथा 'वन प्यारी' बाल-पुस्तकें पुरस्कृत कीं। भारत सरकार के प्रकाशन विभाग से 'विज्ञान एवं कृषि पत्रकारिता : क्यों और कैसे' की पाण्डुलिपि पर पुरस्कार।

इण्टरनेशनल साइंस राइटर्स एसोसिएशन, यूरोपियन साइंस एडीटर्स एसोसिएशन, एशियन-एग्रो हिस्ट्री एसोसिएशन के सदस्य तथा इंडियन साइंस राइटर्स एसोसिएशन के सचिव, उपाध्यक्ष तथा अब अध्यक्ष (1999-2003)। इंटरनेशनल राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट मनीला (फिलिपीन्स) में विजिटिंग एडीटर।

'सेन्टर फॉर एग्रीकल्चर एण्ड बायोसाइंस इंटरनेशनल (कैबी), यू.के. के भारत में कोआर्डीनेटर (मार्च 1999-मार्च2002)। भारत में उसका कार्यालय स्थापित किया। इस समय अन्तर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान के भारत कार्यालय के लिए 'पूर्वी भारत में बारानी धान' का लेखन। भारतीय वैज्ञानिकों तथा वैज्ञानिक संगठनों पर वृत्तचित्रों के लिए अनुसंधान और आलेख। 'जीनियागरी', 'काया की माया', 'हरी दुनिया', 'कृषि-क्रांति का स्वर्ण पथ', 'विज्ञान युग', 'विरासत के दूत' पुस्तकों की पाण्डुलिपियाँ तैयार। गजलों का संग्रह (गुस्ताखी) और व्यंग्य पुस्तक (लाल फीता) तथा कविता संकलन भी प्रकाशनार्थ तैयार।

डॉ॰ रमेश दत्त शर्मा : व्यक्तित्व और कृतित्व

पुरस्कार और सम्मान

* 'विज्ञान' में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक लेख के लिए विज्ञान परिषद्, प्रयाग द्वारा डॉ॰ गोरखप्रसाद पुरस्कार (1980)।
* विज्ञान वैचारिकी अकादमी पुरस्कार (हिन्दी विज्ञान साहित्य में योगदान के लिए)।
* हिन्दी विज्ञान साहित्य के संवर्धन में विशेष योगदान के लिए दिल्ली हिन्दी अकादमी का साहित्यकार सम्मान।
* हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की 'साहित्य वाचस्पति' उपाधि।
* स्वंतत्र पत्रकार परिषद्, नई दिल्ली का सर्वश्रेष्ठ कृषि-पत्रकार सम्मान।
* भारत कृषक समाज का सर्वश्रेष्ठ कृषि पत्रकार सम्मान।
* हिन्दी के विज्ञान साहित्य में योगदान के लिए केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्रालय का डॉ. आत्माराम पुरस्कार।
* केन्द्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय की राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषंद का संचार माध्यमों में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के सर्वश्रेष्ठ कवरेज के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार।
* दिल्ली हिन्दी अकादमी द्वारा 'धान कथा' तथा 'वनप्यारी' को सर्वश्रेष्ठ बाल साहित्य पुरस्कार।
* सर्वोत्तम रेडियो कृषि कार्यक्रम के लिए संयुक्तराष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन का विश्व खाद्य दिवस पुरस्कार (नाटक : छह महीने की रात)।
* हिन्दी में कृषि संबंधी सर्वश्रेष्ठ लेखन के लिए विश्व खाद्य दिवस पुरस्कार (पर्यावरण के लिए खतरे की घंटी) ।
* हिन्दी में कृषि संबंधी सर्वश्रेष्ठ टीवी-कार्यक्रम के लिए विश्व खाद्य दिवस पुरस्कार (काली मिट्टी में उजाले की किरणें) (इक्रीसेट' पर वृत्तचित्र की पटकथा)।
* सोसायटी फॉर इन्फार्मेशन साइंस (एस. आई. एस.) के मानद फेलो।

वैज्ञानिक समितियों की सदस्यता

* भारतीय विज्ञान लेखक संघ के संस्थापक सदस्य (आजीवन) सचिव, उपाध्यक्ष, अध्यक्ष (1999-2003)
* इण्टरनेशनल साइंस राइटर्स एसोसिएशन के सदस्य
* यूरोपियन एसोसिएशन ऑफ एडीटर्स के सदस्य
* सोसाइटी फॉर इनफार्मेशन साइंस के आजीवन सदस्य
* विज्ञान परिषद, प्रयाग के आजीवन सदस्य
* विज्ञान परिषद, प्रयाग की दिल्ली शाखा के अध्यक्ष
* दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'वैज्ञानिकी' मासिक गोष्ठी के संयोजक
* दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अखिल भारतीय 'विज्ञान सरस्वती पुरस्कार' तथा 'राष्ट्रीय विज्ञान साहित्य सम्मेलन' के संयोजक।
* इण्डियन एसोसिएशन ऑफ एडवांसमेन्ट ऑफ साइंसेज के संस्थापक सदस्य तथा गवर्निंग बॉडी के सदस्य
* 'विज्ञान प्रसार' की समीक्षा-समिति के सदस्य
* एन.सी.एस.टी.सी. की समीक्षा-समिति के सदस्य

* सी.एस.आई.आर. की भारतीय विज्ञान पत्रिका समिति के सदस्य तथा सचिव
* दिल्ली दूरदर्शन की कृषि कार्यक्रम सलाहकार समिति के सदस्य
* आकाशवाणी, दिल्ली की विज्ञान कार्यक्रम सलाहकार समिति के सदस्य

व्याख्यान तथा गोष्ठियाँ

* विज्ञान परिषद, प्रयाग में डॉ. आत्माराम स्मृति व्याख्यान ।
* इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ मास कम्यूनीकेशन, नई दिल्ली में हिन्दी में विज्ञान पत्रकारिता पर व्याख्यान ।
* कृषि विस्तार निदेशालय में 'कृषि-लेखन की रोचक कैसे बनायें' विषय पर व्याख्यान।
* कृषि विश्वविद्यालय राहुड़ी में 'कृषि पत्रकारिता' पर व्याख्यान ।
* राष्ट्रीय अनुवाद ब्यूरो में वैज्ञानिक अनुवाद पर व्याख्यान।
* इन्स्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेन्ट डेवलपमेन्ट, लखनऊ में व्याख्यान।
* टाइम्स सेन्टर फॉर मीडिया स्टडीज में 'विज्ञान पत्रकारिता' पर व्याख्यान ।
* एन.सी.एस.टी.सी. की भोपाल, ग्वालियर, रामपुर, शिमला, चम्बा, नई दिल्ली, इलाहाबाद, लखनऊ में विज्ञान पत्रकारिता गोष्ठियों में व्याख्यान।

मौलिक पुस्तकें

सं.	पुस्तक का नाम	प्रकाशक का नाम	वर्ष
1.	भारतीय पादप रोग विज्ञान (बी.एस-सी. (कृषि) की प्रथम पाठ्य पुस्तक)	रामा प्रकाशन, बड़ौत	1966
2.	स्वस्थ विश्व की ओर	विश्व स्वास्थ्य संगठन,	1973
3.	सूरज भरता पानी (ग्रामीण जीवन के पर्यावरण पर आधारित उपन्यास)	विज्ञान कथा माला भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ,नई दिल्ली	1987
4.	धान कथा	नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली	1991 प्रथम संस्करण
5.	द स्टोरी ऑफ राइस	नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली	2003 तृतीयसंस्करण
6.	भारत में कृषि अनुसंधान : संगठन प्रबंध और संचालन की एक झलक	फूड एण्ड, एग्रीकल्चरल आर्गेनाइजेशन, रोम तथा इंडियन एसोसिएशन आफ एडवांसमेंट आफ साइंसेज, नई दिल्ली	1995
7.	हमारे वैज्ञानिक	पराग प्रकाशन नई दिल्ली	

अनुवाद

1.	जिन्होंने भविष्य बनाया	1966
2.	वनस्पति जगत	1967
3.	हरे पौधे	1967
4.	काफी	1967

5. मूँगफली की खेती 1967
6. मुर्गी पालिए 1967
7. सब्जियाँ उगाइये 1967
8. पशुपालन 1967
9. आधुनिक जीव विज्ञान 1968
10. जंगल के साथी 1980
11. ब्रिटिश वैज्ञानिक एवं आर्थिक समीक्षा 1986 से 2003 तक के हर अंक में 6-7 वैज्ञानिक लेख ।

पुस्तकें जिनमें डा॰ शर्मा द्वारा लिखित अध्याय हैं

1. कंबिंग कैन्सर — वार अगेंस्ट डिजीज — संपादक जी॰ एस॰ भार्गव — 1971
2. प्रकृति से छेड़छाड़ क्यों? — ज्ञान गंगा, भाग-7 — संपादक प्रभाकर द्विवेदी
3. हरित क्रांति — भारती, भाग-3 — 1980
4. ये परजीवी — जीवन और विज्ञान — संपादक रामनिवास राय — 1980
5. बनारसी कुंज का पपीहा — डॉ॰ नेमीचन्द्र जैन अभिनन्दन ग्रंथ संपादक प्रकाश अमेय — 1970
6. हिन्दी में विज्ञान- साहित्य के पच्चीस वर्ष — भाषा-रजत जयंती विशेषांक मार्च से जून — संपादक जगदीश चतुर्वेदी — 1985
7. नेहरू, विज्ञान और हमारी खेती विज्ञान
8. जीव विज्ञान — एन.सी.ई.आर.टी नई दिल्ली — संपादक प्रो॰ पंचानन महेश्वरी, डॉ॰ मनोहर लाल
   जीवन के बारे में कुछ आधारभूत बातें (खण्ड-1)
   वनस्पतियों की विविधता (खण्ड- 2)
   जंतु जीवन की विविधता (खण्ड-3)
   वनस्पतियों और जन्तुओं का क्रिया विज्ञानं (खण्ड-4)
   पुनरुत्पादन या जनन (खण्ड-5)
   आनुवंशिकता विकास और अनुकूलन (खण्ड-6)
   सामान्य (खण्ड-7)
9. हिन्दी में विज्ञान लेखन के सशक्त हस्ताक्षर : डॉ॰ आत्माराम — विज्ञान लोकप्रियकरण प्रारंभिक प्रयास — 1997
10. नव भारत टाइम्स, — 1978
    संवत्सर 1978 रहस्यों के घेरे में
    (1) जीवन क्या है
    (2) देह की इकाई
11. करेन्ट ट्रेन्ड्स इन इनफार्मशन टेक्नॉलॉजी : इम्पैक्ट आन इनफार्मेशन सीन इन इंडिया — 1993
12. कृषि नैट : द एग्रीकल्चर इन्फार्मेशन नेटवर्क इन इंडिया

13. इनफार्मेशन मैनेजमेंट फार रूरल डेवेलपमेंट अध्याय एग्रीकल्चरल जर्नलिज्म
14. ए काल टू द यूथ अध्याय टुडेज यूथ : ए बायोलाजिकल रिवोल्यूशन
15. प्राचीन भारत में वनस्पति विज्ञान : डॉ॰ संपूर्णानन्द स्मृति ग्रंथ 1994

महत्वपूर्ण लेख

1. वैज्ञानिक अनुवाद में सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की समस्या	अनुवाद		1961
2. जिनको हमने चीनी बनाना सिखाया	त्रिपथगा,	जनवरी	1964
3. मरुस्थल में मंगल : विकास की नई दिशा	सम्पदा,	अक्टूबर	1968
4. क्या पिल से कैंसर हो सकता है?	सचित्र आयुर्वेद		1968
5. कृषि विकास का लाभ जन-जन तक पहुँचे	कुरुक्षेत्र,	अक्टूबर	1972
6. कृषक प्रशिक्षण का आर्कषण केन्द्र, कुआरसी अलीगढ़	कुरुक्षेत्र,	नवंबर	1973
7. गोबर की आँखों से एग्री एक्स्पो-77	लोकराज,	मई	1978
8. सितारों की गर्दिश और हमारी दुनिया	सनातन ज्योति		1979
9. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम	कुरुक्षेत्र,	जनवरी	1983
10. गाँव-गाँव में गोबर गैस	कुरुक्षेत्र,	फरवरी	1984
11. खेत खेत में पानी	कृषि मण्डी उपज समाचार,	सितम्बर	1984
12. गेहूँ ने रंग बदला	होशंगाबाद विज्ञान,	अक्टूबर	1985
13. एग्रो कम्यूनिकेशन इन इंडिया	एग्रीकल्चरल ग्रोथ इन इंडिया		1985
14. दक्षिण गंगोत्री और विज्ञान की गंगा	गंगा प्रवेशांक	अक्टूबर	1985
15. धान : जमीन से उगता हरा सोना	पब्लिक एशिया,	जुलाई	1989
16. टिकाऊ खेती यथार्थ या स्वप्न	विकल्प, अंक 2		1990
17. फिलीपीन्स में भारत	शांतिदूत,	नवंबर - दिसम्बर	1990
18. इक्कीसवीं सदी की कृषि चुनौतियाँ	उद्योग व्यापार पत्रिका,	फरवरी	1991
19. विश्व को भारत की देन : धान	शांतिदूत,	जुलाई -अगस्त	1992
20. गायब होने वाली दवा	नंदन प्राचीन कथा विशेषांक,	मई	1993
21. आ रही है एड्स की नई दवा	विश्वास,	अक्टूबर	1993
22. ग्रामीण विकास के प्रयास को लीलती आबादी	कुरुक्षेत्र,	अक्टूबर	1993
23. इक्कीसवीं सदी की चुनौतियाँ	हिन्दी काल निर्णय,		1996
24. पौधों को मनचाही ऋतु और जलवायु देने वाली प्रयोगशाला फाइटोट्रान	हिन्दी काल निर्णय,		1997
25. इस सदी के महान आविष्कार	काल निर्णय पंचांग का पृष्ठीय साहित्य	दिसंबर	2000

M. S. SWAMINATHAN RESEARCH FOUNDATION

M. S. SWAMINATHAN
Chairman

MSS/RM/1043
6 April 2003

Dr Shiv Gopal Mishra
Chief Editor, Vigyan
25 Ashok Nagar
Allahabad
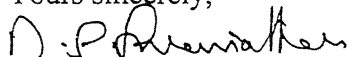
Dear Dr Mishraji,

I am very happy to learn that you are bringing out a special issue of **Vigyan** on the life and work of Dr R D Sharma. I have known and worked with Dr Sharma for over 30 years and I can say without hesitation that no one is more worthy of such recognition than Dr Sharma.

Dr Sharma has devoted his life to promote agricultural renaissance and agrarian prosperity in our country, using his great capability in communicating in Hindi and English to farm women and men, scientists, extension officers, the public and political leaders the latest developments in science and technology as applied to agriculture. He has also helped the International Rice Research Institute, Los Banos, the Philippines and the CAB International, London in spreading throughout the world their scientific findings. He is one of the most respected and admired science communicators of own time. His life and work will inspire generations of science journalists.

With warm regards,

Yours sincerely,

M S Swaminathan

Our new nos. 2254 2790 / 2254 1229; Fax: 2254 1319

3rd Cross Street, Taramani Institutional Area, Chennai (Madras) - 600 113, INDIA.
Telephone : (044) 2351229, 2351698, Fax : +91-44-2351319
E-mail : msswami@mssrf.res.in

मेरे प्रिय मित्र रमेश जी

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

"विज्ञान" पत्रिका के सम्पादन काल में (1962-63 में) एक नये लेखक से मेरा सम्बन्ध जुड़ा। यह लेखक थे श्री रमेशदत्त शर्मा। इन्होंने एक लम्बा पत्र लिखते हुए एक लेख भेजा था जो मंगल ग्रह पर जीवन के सम्बन्ध में था। उस लेख की शैली मुझे पसन्द आयी और मैंने यह लेख छाप दिया। उनसे मेरी भेंट इसके कई वर्षों बाद हुई, जब मैं 1970 में सी. एस. आई. आर. के प्रकाशन निदेशालय में "भारत की सम्पदा" का 'विशेष हिन्दी अधिकारी' बन कर दिल्ली गया। इसके पूर्व वे कृषि विश्वविद्यालय, पन्तनगर में प्रकाशन विभाग में कृषि की पाठ्य पुस्तकें तैयार कराने और उन्हें प्रकाशित करने में लगे थे। "भारत की सम्पदा" के लिए तभी उन्होंने कई लेखों का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद किया था। इनका संशोधन करते समय मुझे उनकी आनुवादिकता का भी पता चला।

1970 में रमेश जी पन्तनगर से कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली "खेती" के सहायक सम्पादक बन कर आ गये। डॉ. रामगोपाल चतुर्वेदी "खेती" के प्रधान सम्पादक थे। रमेश जी प्रायः कृषि भवन से मेरे कार्यालय आते रहते और कभी-कभी मुझे अपने कार्यालय ले जाते। उन्होंने डॉ. रामगोपाल चतुर्वेदी, डॉ. अम्बिका सिंह तथा डॉ. गौतम से मेरा परिचय कराया। धीरे-धीरे रमेश जी मुझसे "खेती" के लिए लेख भी लिखाने लगे।

रमेश दत्त जी को मैं शुरू से ही "शर्मा जी" कहता आया हूँ और वे मुझसे वय में छोटे हैं अतः वे मुझे सदैव "भाई साहब" कहकर सम्बोधित करते रहे हैं। वे मुझे सदैव हँसमुख और प्रसन्नचित्त दिखे। वे प्रारम्भ से ही "खेती" के सम्पादन कार्य के अलावा अन्य प्रकार का लोकप्रिय विज्ञान लेखन भी करते हैं। वे मुझसे कभी बताते कि आज रेडियोवार्ता देनी है,कभी कहते कि अमुक कृषि विज्ञानी का साक्षात्कार लेना है, कभी कहते- चलिये, आपको हरीश जी से मिलाते हैं जो 'नवभारत टाइम्स' में विज्ञान स्तम्भ के सम्पादक हैं। मेरे हिसाब से शर्मा जी बहुत ही मिलनसार एवं बहुआयामी व्यक्ति रहे हैं जबकि मैं अत्यन्त संकोची स्वभाव का रहा हूँ।

एक बार मैं अपने कार्यालय में था। मेरे सहायक तुरशन पाल पाठक ने आकर सूचना दी कि रमेश जी तीस हजारी के पास स्कूटर दुर्घटना में बेहोश हो गये हैं। मैं उन्हें देखने अस्पताल पहुँचा था, फिर उनकी खोज खबर लेने उनके आवास राणा प्रताप बाग भी जाता रहा। वहीं उनकी पत्नी और उनके साले से मेरी भेंट हुई थी। उनकी पत्नी अत्यन्त सौम्य थीं।

श्री रमेश दत्त जी प्रायः मेरे आवास वेस्ट पटेल नगर पहुँचते रहते और लेखन के बारे में बातें करते थे। उन्होंने 'सप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सम्पादक मनोहर श्याम जोशी से मेरा परिचय कराया और उनके लिए कई लेख भी लिखाये। मैं दिल्ली में अधिक काल तक नहीं रह सका और इलाहाबाद वापस आ गया।

मैं जब भी 'विज्ञान परिषद्' की गोष्ठियों में रमेश जी को बुलाता तो वे उनमें अवश्य आते रहे। वे पन्तनगर से दिल्ली आकर कृषि भवन में ही जम गये और

लगभग 30 अमूल्य वर्ष वहाँ पर क्रमशः उन्नत पदों पर बिताये। इसका विवरण उन्होंने "खेती में जुते मेरे 27 वर्ष" शीर्षक से "खेती स्वर्ण मंजूषा" (1998) में दिया है।

श्री रमेश दत्त जी विज्ञान लेखन के संवर्धन की नई-नई योजनाएँ बनाते और उनमें सम्मिलित होते रहे हैं। मुझे स्मरण है कि है 1970 में डॉ. आत्माराम के सुझाव पर जब "भारतीय विज्ञान पत्रिका समिति" बनी और मैं उसका प्रथम सचिव बनाया गया तो शर्मा जी सभी प्रकार से मेरा सहयोग करते रहे और जब मैं दिल्ली छोड़कर इलाहाबाद आने लगा तो उन्हें ही उसका सचिव बनाया गया। दो तीन वर्ष बाद शर्मा जी ने डॉ. आत्माराम को प्रेरित करके 'भारतीय विज्ञान संवर्धन समिति' की स्थापना कराई जिसका एक सदस्य मैं भी था। इस समिति के तत्वावधान में कई लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकों के लेखन की योजना बनाई गई जिसके अन्तर्गत डॉ. आत्माराम ने स्वयं "ओजोन की छतरी" पुस्तक लिखी। अन्य पुस्तकें -"विज्ञान बस्ते में, बैक्टीरिया अदालत में" आदि भी छपीं।

श्री रमेश दत्त जी दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साथ भी सहयोग कर रहे थे। 1983 में उन्होंने "विज्ञान सरस्वती पुरस्कार" के अन्तर्गत कई हिन्दी विज्ञान लेखकों को सम्मानित कराया जिनमें मैं भी एक था। कुछ वर्षों पूर्व जब उन्होंने "इण्डियन साइंस राइटर्स एसोसिएशन" (ISWA) का अध्यक्ष पद संभाला तो दो व्यक्तियों को मानद फेलोशिप प्रदान की गयी जिनमें मैं भी एक था।

1987 में विज्ञान परिषद् ने 'अमृत महोत्सव' मनाने का संकल्प किया तो शर्मा जी ने सुझाव दिया था कि इस महोत्सव का उद्घाटन तत्कालीन प्रधान मंत्री राजीव गांधी के हाथों से कराया जाय। किन्तु उनका प्रयास सफल नहीं हुआ।

1989 में शर्मा जी ने मेरी अत्यधिक सहायता की। आल इंडिया मेडिकल इंस्टीट्यूट में मेरी बेटी के मस्तिष्क का आपरेशन होना था। इसके लिए उन्होंने डॉ. ए. के. बनर्जी से मिलकर तिथि नियत की और बाद में जब आपरेशन हुआ तो भी वे लगातार डटे रहे। इस बीच मुझे उनके घर में आकर रहना पड़ा। उस काल में उनके सारे परिवारजनों ने अत्यन्त आत्मीयता बरती। तब से शर्मा जी के पूरे परिवार से मेरा अन्तरंग सम्बन्ध रहा है जिसमें उनके साले कुलदीप शर्मा भी सम्मिलित हैं।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई थी कि अपनी व्यस्तता के बावजूद वे वनस्पति विज्ञान में डाक्टरेट डिग्री के लिए शोधकार्य भी कर रहे हैं। उसके लिए उन्होंने स्वामी सत्यप्रकाश तथा मेरी पुस्तकों की भी सहायता ली। अब तो वे श्री रमेश दत्त शर्मा से 'डॉ. शर्मा' बन चुके हैं किन्तु मेरी जबान पर तो 'रमेश जी' ही रहता आया है। मैं जब भी दिल्ली गया उनके यहाँ अवश्य जाता रहा। उनके नये आवास हवासिंह ब्लाक भी गया हूँ।

इधर के चार पाँच वर्षों में रमेश जी को गठिया की शिकायत रहने लगी तो वे विज्ञान परिषद् की गोष्ठियों में नहीं आ पाते थे किन्तु मुझे सहयोग देने के उपयुक्त अवसरों पर वे आने से चूके नहीं। 1996-97 में "विज्ञान प्रसार" दिल्ली की ओर से "विज्ञान लेखन के 100 वर्ष" प्रोजेक्ट को अन्तिम रूप देने वे डॉ. नरेन्द्र सहगल के साथ आये। इसी तरह फरवरी 1999 में विज्ञान परिषद प्रयाग में 'डॉ. आत्माराम स्मृति व्याख्यान' देने के लिए आये और फिर कई वर्ष बाद अगस्त 2002 में चण्डीगढ़ में 'शब्दावली आयोग' की एक कार्यशाला में भेंट हुई। मैंने उनसे कहा कि विज्ञान परिषद् आपके सम्मान में एक विशेषांक प्रकाशित करना चाहती है। पहले तो वे ननुनच करते रहे किन्तु बाद में तैयार हो गये कि वे अपने लेखों की सूची तथा अपने परिचितों के पते हमें देंगे। इसमें

उन्होंने कई मास लगा दिये।

लेखन/कृतित्व

श्री रमेश दत्त जी ने इतना अधिक लिखा है और इतने विषयों पर लिखा है कि हिन्दी का प्रत्येक विज्ञान पाठक उनसे परिचित हैं। उन्होंने विगत 40 वर्षों में नवनीत, कादम्बिनी, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, धर्मयुग, विज्ञान, विज्ञान प्रगति, आविष्कार, वैज्ञानिक, खेती, भाषा आदि पत्रिकाओं मे कम से कम 1000 लेख लिखे होंगे। लेखों के अतिरिक्त उन्होंने विज्ञान गल्प और विज्ञान कविताएँ भी लिखी हैं। उन्होंने अनेकानेक वैज्ञानिकों तथा डाक्टरों से साक्षात्कार करके अत्यन्त रोचक इंटरव्यू लिखे हैं। वे फीचर, आवरण कथा, आदि लिखने में सिद्धहस्त हैं। वे ऐसे विज्ञान-लेखक हैं जिन्होंने प्रिंट मीडिया के साथ-साथ दृश्य-श्रव्य माध्यमों के लिए खूब लिखा है। रेडियो तथा टेलीविजन में शर्मा जी के कार्यक्रमों की धूम मची रहती थी।

शर्मा जी हिन्दी के पहले ऐसे विज्ञान लेखक हैं जिनकी **शैली चमत्कारिक है- वह बहुरूपिया** है। उनका शब्द चयन अत्यन्त ललित होता है। वे लोकप्रचलित शब्दों पर अधिक बल देते हैं बनिस्बत पारिभाषिक शब्दावली के। उन्होंने अनेकानेक नये शब्द गढ़े हैं जिनका खूब प्रचलन है। इनमें एक है जीनियागरी'। उनकी लेखन शैली से प्रभावित होकर मैंने एक बार यह लिखा था, यह युग "रमेश दत्त शर्मा युग" कहलावेगा।

डॉ. शर्मा में लेखकीय दायित्व के साथ जो सबसे बड़ा गुण है वह निर्भीकता का है। सरकारी नौकरी में रहते हुए भी उन्होंने सभी माध्यमों के लिए लिखा और यथास्थान सरकारी नीतियों की कटु आलोचना भी की। मैं इस मामले में शर्मा को अत्यन्त निर्भीक एवं जिम्मेदार पत्रकार मानता हूँ।

एक तरह से डॉ. शर्मा विज्ञान पेत्रकारिता के क्षेत्र में गम्भीर विज्ञान लेखन के क्षेत्र का नेतृत्व करने वाले हैं। वे एक समूची पीढ़ी का मार्गदर्शन करने वाले हैं। प्रमोद जोशी, प्रेमानन्द चन्दोला, गुणाकर मुले आदि इनके प्रतियोगी लेखक हैं जिनके बीच इनकी अलग पहचान है। इनमें मिलनसारता है, ये नये लेखकों को उत्साहित करते हैं, नई नई योजनाओं से सदैव अनुप्राणित करते आये हैं।

इनके लेखों के शीर्षक बड़े ही चुटीले एवं मोहक होते हैं। ये कृषि एवं जैव प्रोद्योगिकी पर अधिकारपूर्वक लम्बे-लम्बे लेख लिखते रहे हैं। अनेकानेक राष्ट्रीय संगोष्ठियों एवं भारतीय विज्ञान कांग्रेस की गतिविधियों की अत्यन्त रोचक रिपोर्टिंग करते रहे हैं।

डॉ. शर्मा कृषि भवन से अवकाशप्राप्त करने के बाद भी महत्वपूर्ण पदों पर कार्य करते आ रहे हैं। उनके पास समयाभाव है। फलतः वे जो भी लिख चुके हैं उसे सहेज नहीं पा रहे। अक्सर मैं उन्हें उलाहना देता रहा हूँ कि आप ऐसे लेखक है जिसकी प्रकाशित पुस्तकों की संख्या अंगुलियों में गिनी जाती है। आप क्यों नहीं अपनी रचनाओं को पुस्तकाकार करते? अब उन्होंने मुझे आश्वासन दिया है कि शीघ्र ही कई पुस्तकें एक साथ लेकर उतरेंगे। आज जो विज्ञान लेखक इतना समादृत है वह इन पुस्तकों के प्रकाशित हो जाने पर पाठकों तथा समीक्षकों द्वारा अवश्य ही और अधिक चर्चित हो सकेगा।

डॉ. शर्मा की लोकप्रियता इतनी अधिक है कि उनके सम्मानों तथा पुरस्कारों को गिनाना उतना महत्वपूर्ण नहीं है। उनका कवि हृदय, उनका हँसमुख व्यक्तित्व और अन्तर में छिपी गम्भीरता उनके लेखन में अनेकशः व्यक्त होती आयी है।

अपने ऐसे मित्र के सम्मान में 'विज्ञान' का यह विशेषांक सादर समर्पित है।

सम्पादक 'विज्ञान'
तथा प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग
इलाहाबाद-211002 (उ. प्र.)

इधर सीखा - उधर सिखाया : हिसाब बराबर

तुरशन पाल पाठक

डॉ. रमेश दत्त शर्मा उन व्यक्तियों की पंक्ति में आते हैं जो जहाँ भी रहते, बसते, विचरते हैं अपने सम्पर्क में आने वालों का कल्याण और केवल कल्याण ही सोचते हैं। द्वेष और आलोचना करने के बवालों से दूर शान्ति से जीना और प्रगति करना यदि कोई सीखना चाहता है तो उसे डॉ. आर. डी. शर्मा जी के सम्पर्क में आना ही चाहिए। ऐसे विचार उनके मित्रों से प्रायः सुनने को मिलते ही रहते हैं और मेरा अपना विचार भी भला इससे भिन्न कैसे हो सकता है।

यदि मैं अपनी बात से शुरू करूँ तो मेरे जीवन की प्रगति में यूँ तो सहयोगी अनके रहे हैं लेकिन जिन्होंने वास्तविक प्रगति की सही दिशा को समझाकर मुझे प्रोत्साहित किया उनमें तीन व्यक्ति प्रमुख हैं। ये तीन व्यक्ति हैं क्रमशः मेरे ग्रामीण क्षेत्र जिला एटा, उ.प्र. के लोकप्रिय नेता स्वर्गीय श्री नबाब सिंह यादव तथा क्रिश्चियन कालेज, एटा के तत्कालीन प्रिंसिपल श्री बिनसेंट स्राइल बाटफोर्ड और यशस्वी विज्ञान लेखक डॉ. रमेश दत्त शर्मा। यादव जी ने पढ़ने की ओर प्रेरित किया तो बाटफोर्ड साहब ने इण्टरमीडिएट पास कर लेने के बाद ही उत्तर प्रदेश सरकार की नौकरी मिल जाने के बाद भी मुझे इसे ज्वाइन न करने की सलाह देकर बी.एस.सी., एम.एस-सी करने की ओर प्रेरित किया ताकि मैं संघ लोकसेवा आयोग की सर्वोच्च सेवा परीक्षाओं में बैठने हेतु योग्य हो जाऊँ।

डॉ. आर. डी. शर्मा ऐसे तीसरे व्यक्ति हैं जिन्होंने मेरे द्वारा एम.एस.सी. कर लेने के बाद के मेरे रास्ते हेतु मुझे भारत की राजधानी दिल्ली को मेरे और मेरे बच्चों के भविष्य की प्रगति के अनेक अवसरों की संभावनाओं का एक विशाल द्वार समझ कर सही दिशा बोध कराया।

यदि सामान्य स्थिति रहती तो मैं दर्जा चार या आठ से अधिक पढ़-लिख नहीं सकता था और गाँव में ही किसी छोटे मोटे रोजगार से कृपणता का जीवनयापन काट रहा होता लेकिन संयोग से 15 अगस्त 1947 की घड़ी आयी जो मुझे डॉ.रमेश जी भावी मिलन होने की ओर ही ले जाती है।मेरे ग्राम औराई जिला एटा, उ.प्र. में जो टूटा-फूटा प्राइमरी स्कूल था मैं भी उसी में पढ़ता था। 15 अगस्त की आजादी के उत्सव पूरे देश में मनाये जा रहे थे। मुझे भी जिला एटा मुख्यालय के उत्सव को देखने हेतु पिताजी के साथ उनकी साइकिल पर बैठकर जाने का अवसर मिल गया था। चारों ओर बड़ी धूम-धाम , रौनक और खुशी का माहौल था, मुख्य समारोह में मिठाइयाँ बँट रही थीं। बाँटते-बाँटते चौ. नबाब सिंह यादव जी दूर खड़े हम लोगों के पास भी आ गये और मिठाई की एक थैली मुझे भी देते हुए तथा मेरे गाल पर एक थपकी लगाते हुए मेरे पिताजी से बोले "पंडित जी इस बच्चे को अब खूब पढ़ाना-लिखाना, अब स्वतंत्र भारत में आपका यह बालक खूब तरक्की करेगा।" बस प्यारभरी आजादी की इस थपकी ने मेरी पढ़ाई की दुनिया ही बदल दी और पढ़ने का ऐसा भूत सवार हुआ कि मैं एक के बाद एक कक्षाएँ पास करता हुआ बी.एस-सी., एम.एस-सी.करने की ललक में बी.आर. कालेज, आगरा जा पहुँचा और पढ़ाई में लग गया। मानो यह सभी घटनाक्रम डॉ. आर.डी. शर्मा जी से मुलाकात और परिचय हेतु स्वतः ही मुझे वहाँ खींचे लिये जा रहे हों।

बी. आर. कालेज में अन्य खेलों के साथ बैडमिंटन, टेनिस, वालीबाल आदि भी लोकप्रिय थे जिन्हें देखने की ललक प्रायः सभी में बनी रहती थी। इन सभी में डॉ. आर. डी. शर्मा जो तब वनस्पति विज्ञान एम. एस-सी. के छात्र के अधिक लोकप्रिय थे। उनके खेलने की कला और बार-बार विजेता होते रहने से मैं भी उनका मुरीद-प्रशंसक बन गया था और इस तरह मैं उन्हें एक-तरफा ही जानने लगा था। जब वे सफेद कमीज, नेकर, जूतों आदि की ड्रेस के साथ हाथ में रैकेट घुमाते हुए खेल के मैदान में

उतरते थे तो रमेश के लिए तालियाँ बजना प्रारम्भ हो जाती थीं, उनके सुन्दर, सुडौल, सुगठित शरीर पर उनकी मधुर मारन मुस्कान के साथ उनके व्यक्तित्व में अजीब निखार आ जाता था। मैं कालेज की स्टूडेण्ट्स यूनियन का सदस्य था,एक्सटेम्पोर डिबेटों में प्रायः विजेता रहता था, लेकिन रमेश दत्त जी पढ़ाई ,कविता, खेल तथा भाषण प्रतियोगिताओं में रुचि के अलावा यूनियन जैसी अन्य बातों से दूर ही रहते थे अतः उनसे वहाँ मेरा कभी व्यक्तिगत परिचय जैसा परिचय नहीं हो पाया और बी. आर. कालेज में हम एक दूसरे से निजी तौर पर अनजान ही बने रहे।

रमेश जी का विवाह श्रीमती आशालता शर्मा जी के साथ 1958 में तब हुआ जब वे एम.एस-सी. प्रथमवर्ष के छात्र थे। विवाह के एक वर्ष बाद 1959 में रमेश जी ने वनस्पति विज्ञान में एम.एस-सी. की परीक्षा पास की और अपने पिता के घर, जलेसर जिला एटा. उ. प्र. के पास ही एक कालेज में अध्यापन कार्य से रोजगार प्रारंभ कर दिया था, लेकिन उनकी निगाह कहीं अन्य और अच्छे पद पर पहुँचने हेतु लगी हुई थी। वे अपने इस उद्देश्य में सफल हुए और संघ लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली के साक्षात्कार आदि की कड़ी परीक्षा उत्तीर्ण करके हिन्दी वैज्ञानिक शब्दावली के अनुसंधान के क्षेत्र में शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली में आ गये।यहाँ आकर शर्मा जी को स्वयं आगे बढ़ने,औरों को आगे बढ़ाने, जो भी सम्पर्क में आया उसकी सेवा करने तथा अपने लेखन को प्रिंट तथा इलेक्ट्रानिक मीडिया के माध्यम से विज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने के उनके रास्तों को नये आयाम मिल गये।

शर्मा जी के पिता जी स्वर्गीय पं.रवि दत्त शास्त्री, राजा साहब अवागढ-जिनके पूर्वज के नाम पर आगरे का प्रसिद्ध कालेज राजा बलवन्त सिंह कालेज स्थापित है - के यहाँ राजकुमारियों के शिक्षक और राजवैद्य थे। उन्हें अपनी बड़ी बेटी आयुष्मती लक्ष्मी के लिए विवाहयोग्य अच्छे वर की तलाश थी। जब मैं एम.एस-सी. प्रथम वर्ष में था वे मेरे पिताजी के पास जिला मुख्यालय के प्रतिष्ठित वैद्य श्री विद्याभूषण जी को साथ लेकर मेरे गाँव औराई एटा आये तो रमेश भी अपने पिताजी के साथ आये थे। मेरे पिता दहेज बिना शादी के पक्षधर थे। कुछ ऐसा हुआ कि श्री विद्याभूषण जी के प्रभाव की तुलना मे रमेश जी के हंसमुख स्वभाव, निश्छल सुन्दरता और आदर भावना तथा वाक्पटुता का कहीं अधिक प्रभाव मेरे समूचे परिवार पर पड़ गया। रमेश जी को देखकर ही सबने लड़की का और लड़की के परिवार का अंदाज लगाते हुए मेरा विवाह रमेश जी की बहिन लक्ष्मी से बिना लड़की देखे ही तय हो गया।

मैं 1960 में एम.एस-सी. (कृषि) प्रथम श्रेणी उत्तीर्ण कर डिग्री कालेज में लेक्चरर के पद पर कार्य करने लगा था और जनता कालेज बकेवर, इटावा के.बी. डिग्री कालेज माँछरा, मेरठ जैसे डिग्री कालेजो में अध्यापन कार्य प्रारम्भ करके अंततः अपने ही बी. आर. कालेज आगरा में सहायक प्रोफेसर के पद पर आ गया था और वहीं स्थिर होकर जीवन बिताने का मन बना लिया था। लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था जिसके कारण रमेश जी के मार्गदर्शन में एक नई दिशा मिली, जिससे मैं भी संघ लोकसेवा आयोग नई दिल्ली की परीक्षा आदि में सफल होकर भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के शब्दावली आयोग हेतु सेवा के लिए चुन लिया गया। इस तरह मैं भी भारत की राजधानी दिल्ली में 15 जनवरी 1963 को आ गया था। अब रमेश जी से नजदीकियाँ और भी घनिष्ठ होने लगीं जो मुझे भी अध्ययन से इतर विज्ञान लेखन आदि की दिशा में एक और एक ग्यारह के समीकरण से आगे ले जाने लगीं।

आज लगभग 40 वर्षों तक का दिल्ली में जीवन व्यतीत कर लेने के बाद मेरा सेवानिवृत्ति का एक नया जीवन प्रारम्भ हो गया है लेकिन रमेश जी के साथ जो घनिष्ठता का सिलसिला शुरू हुआ था वह आज भी बरकरार है। भला ऐसे सज्जन कितने लोगों को नसीब होते हैं जो किसी के जीवन को एक नई राह का अच्छा रास्ता दिखाकर उसकी राहों में एक नया उजाला भर देते हैं। रमेश जी इसी श्रेणी के मार्गदर्शकों की गिनती में आते हैं। ऐसा ही मेरा मानना है।

वे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद नई दिल्ली से

निदेशक प्रकाशन के पद से 1999 में जैसे ही रिटायर हुए , यू. के. के कृषि और जैव विज्ञान से संबंधित अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र (कैबी) ने उन्हें लपक लिया और उन्हें आई.सी.ए.आर. तथा कैबी के सूचना, प्रकाशन डाकूमेन्टेशन, बायोसाइंस, ट्रापिकल हेल्थ तथा भारत में अन्य वैज्ञानिक संस्थानों में समन्वय के कार्यों के लिए प्रोग्राम को-आर्डीनेटर के पद पर रख लिया ताकि इन संस्थानों की परस्पर योजनाएँ समन्वित हो सकें। शर्माजी ने यह कार्य सफलतापूर्वक कर दिखाया।

इस तरह से यदि मैं यह कहूँ कि शर्मा जी अपने सेवाभाव, सौम्यता से और विज्ञान जैसे दुरूह विषयों को जहाँ जैसे श्रोता हों अथवा पाठक हों उन्हीं की समझ और स्तर पर आकर रोचक कहानी की तरह विज्ञान को अभिव्यक्त करने की कला में पारंगत होकर अब केवल भारत के न रहकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर के हो गये हैं जो हम सभी के लिए भी गौरव की बात है ।

शर्मा जी ने एक हजार से अधिक लोकप्रिय विज्ञान के प्रेस हेतु फीचर और 500 से अधिक रेडियो के लिए और लगभग इतने टी.वी. के लिए प्रोग्राम किए हैं जिसमें विज्ञान के विविध क्षेत्रों का उपयोगी कवरेज रहा है। 9 जून 1963 को तत्कालीन 'धर्मयुग' में शर्माजी का 'डी.एन.ए.' पर पहला लोकप्रिय विज्ञान का लेख छपा था जो विज्ञान लेखन में ऐसी स्मरणीय घटना बना कि लगभग देश के सभी राष्ट्रीय अखबारों में और हिन्दी पत्रिकाओं में विज्ञान लेखन हेतु 'चेन रिएक्शन' का आधार बन गया। वैसे भी यह लेख डी.एन.ए. पर नोबेल प्राइज मिलने वाली खोज पर आधारित था जिसे शर्मा जी ने घर-घर पहुँचा दिया था। चोटी के वैज्ञानिकों से साक्षात्कार, विश्व स्वास्थ्य दिवस जैसे अवसरों, नोबेल प्राइज स्तर की खोजों, अंधविश्वासों के निवारणों, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक घटनाओं आदि पर शर्मा जी के लेख एवं प्रस्तुतियाँ आज भी स्मरणीय होती हैं।

भारतीय विज्ञान लेखन संघ, नई दिल्ली की विज्ञान फीचर सेवा का कार्य शर्मा जी ने 1989 और 1990 दो वर्षों तक किया। यह आई डी आर सी सहायता पर आधारित कार्य था। इसमें शर्मा जी ने पारिस्थितिकी, स्वास्थ्य सफाई, एवं भारत की दवाओं, पर्यावरण प्रबंध, ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत, अंतरिक्ष, न्यूक्लियर विज्ञान और कृषि आदि के क्षेत्र में सरल हिन्दी में ऐसे फीचर तैयार किये जो भारत के छोटे और मझोले समाचारपत्रों में विज्ञान के जन साधारण पाठकों हेतु लोकप्रिय हो गये जिससे भारत के कस्बों, छोटे शहरों और ग्रामों के विज्ञान प्रसार के प्रति जनमानस में अभिरुचि जागृत हो गयी।

प्रेस इंन्फारमेशन ब्यूरो, पी.टी.आई., सम्प्रेषण, ई.ई.जी. आदि की लोकप्रिय विज्ञान फीचर सेवाओं के लिए शर्मा जी ने समय समय पर विशेष कार्य किया है। हिन्दी, अंग्रेजी और अन्य भारतीय भाषाओं के लिए रंगीन पाजिटिव पेज सेवा का सूत्रपात शर्मा जी ने किया जिससे विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लोकप्रियकरण में प्रिंट मीडिया को सहजता के साथ बड़ा अच्छा लाभ हुआ। इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि केवल हिन्दी भाषा के पाठकों की संख्या ही इस सेवा हेतु 300 लाख से अधिक हो गयी थी जो अपने आप में एक मानक है।

अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान सम्मेलनों के मीडिया कवरेज हेतु शर्मा जी ने 50 से अधिक वर्कशाप, सिम्पोजियम आदि में भाग लिया है और वे प्रायः अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी कांग्रेसों की मीडिया समितियों के संयोजक अथवा अध्यक्ष रहे हैं। वे इनके प्रचुर कवरेज हेतु प्रेस, रेडियो, टी.वी. तथा बुलेटिनों की सामग्रियों की योजना एवं कार्यन्वयन का कार्य सफलतापूर्वक करते रहे हैं।

युवा लेखकों को आकर्षित और प्रेरित करने का शर्मा जी में अद्वितीय गुण है। वे अपने 40 वर्ष के लेखन के अनुभवों में से चुनिंदा घटनाएँ एवं गुर निकाल कर युवाओं को प्रोत्साहित करने में माहिर हैं। तभी तो राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार परिषद (एन.सी.एस.टी.सी.) की राष्ट्रीय कार्यशालाओं में शर्मा जी प्रमुख स्रोत विशेषज्ञ के रूप में आमंत्रित किये जाते रहे हैं। इन सम्मेलनों में भोपाल, जबलपुर, रायपुर, ग्वालियर, लखनऊ, शिमला, चम्बा, लुधियाना और इलाहाबाद की कार्यशालाओं में शर्मा जी की प्रस्तुतियों ने युवा लेखकों की एक नई पीढ़ी तैयार होने में योगदान दिया है।

शेष पृष्ठ 15 पर

मेरे प्रिय मित्र और सहयोगी - रमेश जी

डॉ. हरीश अग्रवाल

डॉ. रमेश दत्त शर्मा जिनको मैंने सदा रमेश जी के नाम से पुकारा मेरे सबसे प्रिय मित्र रहे हैं। मुझसे आयु में लगभग आठ वर्ष छोटे हैं, लेकिन उनका अनुभव मुझसे आठ वर्ष अधिक लगता है। यह उनकी उदारता है कि वे अपनी प्रशंसा सुनना नहीं चाहते। वे सदैव दूसरों की सहायता के लिए तत्पर रहते हैं। इतने ऊँचे पदों पर रहते हुए भी उन्होंने कभी अफसरी का व्यवहार नहीं किया, हर एक के साथ घुलमिल कर काम किया। किसी पर अपना रौब नहीं जमाया। वे सदा से सरल स्वभाव के रहे है। मैंने उनको कभी गुस्सा होते नहीं देखा। उनके चेहरे पर सदैव मुस्कान देखी। कुछ पूछिए तो हँसकर जबाब देते हैं।

मुझे इस बात पर गर्व है कि रमेश जी और मैं एक ही जिले के हैं। हमारी शिक्षा-दीक्षा एक ही विश्वविद्यालय में हुई और हमने एक ही पेशा अपनाया अर्थात् पत्रकारिता और वह भी विज्ञान लेखन। शायद इसी के कारण मेरी उनसे मित्रता और निकटता बढ़ी। जैसा स्वभाव उनका वैसा मेरा। जहाँ तक मुझे याद है मैं रमेश जी के सम्पर्क में साठ के दशक में आया। हम दोनों विज्ञान लेखक थे, और मेरी तरह रमेश जी भी पत्र-पत्रिकाओं में लिखते थे और रेडियो कार्यक्रम करते थे। तब टेलीविजन तो था ही नहीं। वह समय विज्ञान लेखन के लिए बड़ा अच्छा था,क्योकि अंतरिक्ष यात्राएँ शुरु हो गयी थीं। रमेश जी का प्रिय विषय कृषि विज्ञान रहा और अंत तक वे कृषि विज्ञान के सम्पादन, निर्देशन तथा लेखन में रहे। लेकिन अन्य विषयों पर भी लिखते रहे, विशेषतः विज्ञान के सीमांत या 'कटिंग एज' से संबंधित विषय। रमेश जी जहाँ भी रहे, मुझसे उनका साथ नहीं छूटा। पंतनगर में रहे, तो मुझसे कुछ - न-कुछ लिखाते या अनुवाद कराते रहे। मैंने देखा है कि स्वयं लिखने का शौक तो उन्हें आरम्भ से रहा लेकिन दूसरों से लिखाने में उन्हें कम आनन्द नहीं आता था। वे एक कुशल पत्रकार की दृष्टि और कलम रखते हैं। उन्होंने समाचार-पत्र में न रहकर भी न जाने कितनी गोष्ठियों और विज्ञान सम्मेलनों की रिपोर्टिंग की। कितने सम्मेलनों में वे मुझसे कंधा से कंधा मिलाकर चले हैं और मुझे भी अनेक गोष्ठियों के लिए आमंत्रित किया है। मुझे जहाँ तक याद है अनेक वैज्ञानिक गोष्ठियों और सम्मेलनों की रिपोर्टिंग रमेश जी के प्रयत्नों से ही सफल रही है। आयोजकों के रूप में पत्रकारों को सूचनाएँ देने में वे सबसे आगे रहते रहे हैं। कठिन से कठिन विषयों को सरल भाषा में समझाते रहे हैं। जहाँ भी वे रहे अनेक पत्रकार तथा विज्ञान लेखक उनके मित्र रहे। अनेक बार वैज्ञानिक गोष्ठियों के प्रसार के लिए प्रेस सम्मेलनों का जिम्मा अपने हाथ में लिया है।

मैं जब 'नवभारत टाइम्स' में रहा, आरम्भ से ही रमेश जी से मेरा सम्पर्क रहा। विज्ञान की कोई बड़ी खबर आती थी, तो मैं उनको सूचित करता था और वे विस्तृत सूचनाएँ लेने मेरे कार्यालय दौड़े आते थे। इतनी उत्सुकता मैंने पत्रकारों में भी नहीं देखी। हरित क्रांति के बारे में रमेश जी ने बहुत लिखा और लिखवाया। डॉ. स्वामीनाथन से उनका सम्पर्क साठ के दशक से रहा। उस समय डॉ. स्वामीनाथन देश में हरित क्रांति को आगे ले जाने के लिए प्रयत्नशील थे। रमेश जी ने उनके इस महान कार्य में पूर्ण सहयोग दिया।

रमेश जी जब वैज्ञानिक शब्दावली आयोग में रहे, मुझसे सम्पर्क रखते रहे। हम लोग डॉ. दौलत सिंह कोठारी से मिलते थे। अनेक शब्दों पर चर्चा होती थी। कोठारी जी चाहते थे कि हिन्दी में विज्ञान लेखन का प्रसार हो। रमेश जी के प्रयत्नों से पत्र-पत्रिकाओं में वैज्ञानिक शब्दावली का प्रसार बढ़ा। उन्होंने यह कभी नहीं चाहा कि यह केवल शब्दावली शब्दकोषों तक ही सीमित रहे। इसके बारे में रमेश जी ने अनेक लेख लिखे और रेडियो पर वार्ताएँ प्रसारित कीं।

रमेश जी की सरल तथा सुबोध लेखन शैली का

सभी लोहा मानते आये हैं। कविता, साहित्य तथा इतिहास का भरपूर ज्ञान होने के कारण वे विज्ञान के कठिन से कठिन विषय को लोकप्रिय बनाने में शत प्रतिशत सफल रहे हैं। किसी वैज्ञानिक सिद्धांत या बात की तुलना हमारे दैनिक जीवन की बातों से करते आये हैं, इसलिए वह आसानी से ग्राह्य होती है। उन्होंने कभी विषय का अपच नहीं होने दिया। एक बार उन्होंने लिखा कि आर. एन. ए. और डी. एन. ए. याद न रहें, तो इन्हें रामनारायण अग्रवाल और दयानारायण अग्रवाल के नामों से याद रखें। जेनेटिक इंजीनियरिंग को उन्होंने 'जीनियागरी' शब्द दिया, जो हिन्दीभाषियों के लिए उपयुक्त एवं सरल है।

साठ से लेकर अस्सी के दशक तक विज्ञान लेखन और प्रसार में रमेश जी का पर्याप्त योगदान रहा। यही तीन दशक ऐसे थे, जब देश में विज्ञान लेखन को बल मिला। मैंने साठ के दशक में पहले विज्ञान लेखक संघ का संगठन किया जिसमें स्वर्गीय कमलेश रे, स्व. बालकराम नागर तथा डॉ. बालकृष्ण करुणाकर नायर आदि थे। इसे आगे बढ़ाने में रमेश जी का सहयोग सराहनीय रहा। संघ की गोष्ठियों में रमेश जी सक्रियता से भाग लेते रहे। इस संघ की गतिविधियाँ कमलेश रे के देहांत के बाद समाप्त हो गयीं। फिर 1985 मे दूसरे विज्ञान लेखक संघ की स्थापना हुई, जिसमें रमेश जी की शुरू से सक्रिय भागीदारी रही। आजकल वे इसके अध्यक्ष हैं। उन्होंनें प्रयत्न यही किया कि प्रमुख वैज्ञानिक इसकी बैठकों में आये। उन्होंने अनेक गोष्ठियों और वैज्ञानिकों के भाषणों का आयोजन कराया।

नब्बे के दशक में यद्यपि रमेश जी ने अवकाश प्राप्त कर लिया, फिर भी वे अपने काम से रिटायर नहीं हुए हैं। अब भी समय-समय पर लिखना, लेक्चर देना तथा गोष्ठियों में भाग लेना जारी है। उन्होंने बहुत कर्मठ जीवन बिताया है और अब भी कर्मठता से काम कर रहे हैं। उनके शब्द-कोश में थकान या निष्क्रियता शब्द नहीं है। परिवार की जिम्मेदारियों को निभाते हुए विज्ञान लेखन,सम्पादन तथा अन्य कार्य करते रहे हैं। इसके अलावा विभिन्न संगठनों के लिए सलाहकार का काम भी कर रहे हैं।

मुझे वर्ष तो याद नहीं है, पर एक बार डॉ. आर्थर कोर्नबर्ग ने घोषणा की थी कि उन्होंने एक विषाणु का जीनक्रम ज्ञात करके उसका परखनली में कृत्रिम संश्लेषण कर लिया है। इस खोज का पूरा ब्यौरा रमेश जी ने मेरे साथ टेलीफोन पर बातचीत के रूप में लिखा था। विज्ञान की बाते रोचक ढंग से बताई जायँ इस बारे में वे बराबर प्रयोग करते रहे। इसका लाभ हम दोनों को हुआ क्योंकि अक्सर वे मुझसे चर्चा करते रहे।

एक बार रमेशजी ने साँपों पर एक लेख लिखा और 'धर्मयुग' को भेजा लेकिन डॉ. धर्मवीर भारती ने उसे यह कर वापस कर दिया, कि इसमें 'पोलिटिकल ओवरटोन' अधिक है। इसका शीर्षक था 'यह विष कहाँ पाया'। इसमें एक जगह लिखा था कि साँपों पर सबसे ज्यादा पुस्तकें इलाहाबाद के जगपति चतुर्वेदी ने छापी है और इलाहाबाद ने ही भारत को सबसे अधिक प्रधानमंत्री दिये हैं। बाद में यह लेख अज्ञेय जी ने 'दिनमान' में प्रकाशित किया।'यह विष कहाँ पाया' अज्ञेय जी की एक व्यंग्य कविता की पंक्ति है। शायद स्वयं कवि होने के कारण रमेशजी अपने विज्ञान लेखन में संदर्भ से जुड़ी कविताओं के अंश बखूबी जोड़ देते हैं।

एक समय था जब 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'धर्मयुग', 'नवनीत', 'दिनमान', 'नवभारत टाइम्स', 'दैनिक हिन्दुस्तान' में उनकी वैज्ञानिक रचनाएँ प्रकाशित होती थीं। इनमें मैं भी लिखता था और तब शायद रमेश जी तथा मैं ही इने-गिने विज्ञान लेखक थे। इसी बीच हम लोगों के बाद की पीढ़ी में शुकदेव, कुलदीप,जगदीप, देवेन्द्र मेवाड़ी, प्रमोद जोशी आदि अनेक लेखक आ गये। रमेश जी ने मुझसे कहा अगर हम ही छपते रहेंगे तो इनके लिए कहाँ जगह बचेगी। इसलिए उन्होंने जान बूझकर पत्र-पत्रिकाओं में लिखना कम किया और रेडियो व टीवी में अधिक सक्रिय हो गये। उन्होंने वास्तव में नये लेखकों को सदैव प्रोत्साहित किया।

एक रिसर्च असिस्टेंट से सन् 1959 में नौकरी शुरू की थी। वे आई. सी. ए. आर. में निदेशक के पद से रिटायर हुए, लेकिन उनको सरकारी पद कभी नहीं भाया। अपने पद पर प्रशासकीय काम करते हुए भी लेखन नहीं छूटा। वे दूसरे लेखक पत्रकारों की तरह ही सरल और सादगी से रहे। सबसे बेहद प्यार। इसीलिए उनके मित्रों

का दायरा बहुत बड़ा है। वे किसी गुटबाजी में शामिल नहीं हुए। एक बार 'धर्मयुग' में उनका लेख छपा था 'हिन्दी के ये उपेक्षित विज्ञान साहित्यकार'। उसमें उन्होंने पहली पीढ़ी के विज्ञान लेखकों -डॉ. सत्यप्रकाश, डॉ. गोरखप्रसाद, डॉ. भगवती प्रसाद श्रीवास्तव, रामचन्द्र तिवारी आदि के बारे में जानकारी देते हुए लिखा था कि हिन्दी साहित्य के किसी इतिहास में इन लोगों के योगदान का कोई उल्लेख नहीं है। इस एक लेख ने उन्हें सभी विज्ञान लेखकों से जोड़ दिया और हिन्दी के पत्रकार जगत में विज्ञान पत्रकार और विज्ञान लेखक नामक प्राणी अवतरित हो गये।

मुझे जहाँ तक याद पड़ता है, उन्होंने मेरे दो लेखों (नवभारत टाइम्स में) पर सम्पादक के नाम पत्र लिखे थे,जो प्रकाशित हुए। मेरे इन लेखों के शीर्षक थे - 'ये बम्बइया वैज्ञानिक' तथा 'डॉ. साहब की आत्महत्या और हमारा विज्ञान'। हम लोग एक दूसरे के बीच शुरू से लिखापढ़ी का आदान-प्रदान करते आये हैं। मैं क्या लिख रहा हूँ और वे किस विषय का अध्ययन कर रहे हैं यह हम बतियाते रहते हैं। मिलना-जुलना भले ही कम हो गया है, लेकिन दोस्ती बरकरार है। हमारे दोनों के परिवार एक-दूसरे से घुले-मिले हैं।

रमेश जी ने युवा पीढ़ी के अनेक लेखकों को विज्ञान लेखन के लिए प्रेरणा दी है। मेरी यही कामना है कि वे ऐसी ही प्रेरणा देते रहेंगे और ऐसे लेखकों की एक और पीढ़ी तैयार कर देंगे। उनका साथ, मित्रता और सहयोग मेरे लिए अमूल्य निधि है, जिसे मैं जीवनपर्यंत सँजो कर रखूँगा।

डी-40, गुलमोहर पार्क
नई दिल्ली-110049

पृष्ठ 12 का शेष

डॉ. रमेश दत्त शर्मा जी को मिलने वाले सम्मान शर्मा जी के लिए तो गौरव की बात हैं ही लेकिन अब तो विज्ञान लेखन से संबंधित सम्मान देने वाली संस्थाएँ आदि स्वयं उन्हें सम्मानित करके गौरव अनुभव करने लगी हैं। शर्मा जी की सादगी में उनकी उपलब्धियाँ सम्मिलित होती चली जा रही हैं, पर शर्मा जी शायद ही कभी अपनी उपलब्धियों का बखान करते पाये गये हों। यह उनकी गंभीरता का द्योतक ही कहा जायेगा।

डॉ. रमेश जी का स्वभाव एवं व्यक्तित्व कुछ ऐसा रहा है कि वे उच्च शिक्षित एवं प्रबुद्ध व्यक्तियों के सम्पर्क में आने और उनसे कुछ न कुछ सीखते रहने के भाग्यशाली रहे हैं। यह सूची वैसे तो बहुत लम्बी है लेकिन जहाँ तक मैं जानता हूँ शर्मा जी के शुभचिंतकों में कुछ प्रमुख विभूतियाँ इस प्रकार हैं -

नोबेल पुरस्कार विजेताओं में डॉ. एन.ई. बोरलॉग एवं डॉ. हरगोविन्द खुराना, शिक्षाविदों में स्वर्गीय प्रो. पी. महेश्वरी, स्व. डॉ. दौलत सिंह कोठारी, स्व. डा. सिद्धेश्वर वर्मा , डॉ. एच.वाई. मोहन राम, डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन, डॉ. हरशरण विश्नोई, विज्ञान लेखक एवं सम्पादकों में स्व. डॉ.रामगोपाल चतुर्वेदी, श्री दयानन्द पंत, स्व. डॉ. (स्वामी) सत्यप्रकाश सरस्वती और डॉ. शिवगोपाल मिश्र, डॉ. नगेन्द्र सहगल प्रमुख हैं।

महानिदेशकों में स्व. डॉ. आत्माराम, डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन, डॉ. आर. ए. माशेलकर, डॉ. मंगला राय, डॉ. पड़ौदा तथा प्रशासक कुलपतियों में डॉ. ध्यान पाल सिंह उल्लेखनीय हैं। इसी तरह साहित्यकारों एवं समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओं के वरिष्ठ सम्पादकों में स्व. श्री धर्मवीर भारती, स्व. श्री राजेन्द्र माथुर, श्री मनोहर श्याम जोशी, हिमांशु जोशी, श्रीमती मृणाल पाण्डे, श्री नारायण दत्त एवं डॉ. कन्हैया लाल नंदन प्रमुख हैं।

इलेक्ट्रानिक मीडिया में रेडियो के प्रोड्यूसरों में श्री लक्ष्मी शंकर बाजपेई एवं श्री बृज मोहन गुप्त उल्लेखनीय हैं, तो टी.वी. कार्यक्रम प्रोड्यूसरों में श्री कौशल किशोर, चौ. रघुनाथ सिंह एवं डी. शरद दत्त प्रमुख हैं।

सेवा निवृत्त - वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं सम्पादक
'भारत की सम्पदा -वैज्ञानिक विश्वकोष'
निस्कॉम, सी. एस. आई. आर.
निवास -सी -4-एच/56 जनकपुरी
नई दिल्ली-110058

लेखक व संपादक के संबंध और उनसे परे

नारायण दत्त

दिग्गज संपादकों की महानता का एक पैमाना यह है कि समर्थ लेखकों की कितनी बड़ी फौज उन्होंने तैयार की। लेकिन मेरे जैसा औसत दर्जे का संपादक तो अपनी सफलता ऐसी छोटी बातों से ही आँक सकता है कि समर्थ लेखकों की कितनी बड़ी टोली वह अपने लिए जुटा सका या अलंकारिक भाषा में कहें तो लेखक-रूपी कल्पवृक्ष अपने लिए कितने खोज सका। यहाँ कल्पवृक्ष से मेरा अभिप्राय ऐसे लेखकों से है जो उसके कहने पर उसके पत्र या पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप स्तरीय लेख तुरंत लिखकर दें। मासिक 'नवनीत' का और बाद में प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया के फ़ीचर लेखों का संपादन करते समय, डॉ. रमेश दत्त शर्मा मेरे कल्पवृक्षों में एक थे।

शायद 1964 की बात है, दिल्ली में मैं अपने एक प्रिय सहपाठी से मिलने केंन्द्रीय हिन्दी निदेशालय गया था। उन मित्र ने वहाँ जिन साथियों से मेरा परिचय कराया, उनमें श्री रमेश दत्त शर्मा भी एक थे। (वे तब तक डाक्टराये नहीं थे) यह सुनकर कि विज्ञान-लेखन में दिलचस्पी और दखल रखते हैं, मैं उनकी ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुआ। मैं उस समय 'नवनीत' का सहकारी संपादक था और उसके लिए नये लेखक जुटाने को उत्सुक था। तुरंत मैंने उन्हें 'नवनीत' में लिखने का न्योता दिया।

अब मुझे याद नहीं कि उनका पहला लेख हमारे यहाँ कौन-सा छपा। किन्तु इतना अवश्य याद है परिचय के उस आरंभिक दौर में ही मैंने डॉ. सी. वी. रामन् का एक रेडियो भाषण हिन्दी में अनुवाद करने के लिए उनके पास भेजा था। उसका विषय था-फूलों के विविध रंग। अनुवाद यथासमय आया। मैंने मूल के साथ उसका मिलान किया, अपनी समझ से आवश्यक सुधार उसमें किये और वह 'फूलों में वर्णभेद' शीर्षक से 'नवनीत' के दीपावली अंक में छपा।

कुछ दिन बाद रमेश जी का पत्र मुझे मिला। उसमें अंक की प्रति और पारिश्रमिक के लिए धन्यवाद दिया गया था, अनुवाद के निखरे रूप और अर्थपूर्ण शीर्षक की सराहना की गयी थी और अंत में इस ओर संकेत किया गया था कि लेख के साथ अनुवादक के रूप में नाम नहीं छपा। यह बात उन्होंने शिकायत के स्वर में नहीं लिखी थी।

मैं उन्हें लिख सकता था कि उनका नाम असावधानी से छूट गया। व्यावहारिकता भी इसी में थी। पर मैंने लट्ठमार ढंग से उन्हें यह लिख भेजा कि अनुवाद में बहुत सुधार करना पड़ा इसलिए नाम देना आवश्यक नहीं समझा गया। ऐसे उजड्ड किस्म के उत्तर देकर लेखकों को बिदकाने का अपराध मुझसे बहुत बार हुआ है। लेकिन रमेश दत्त जी नहीं बिदके। बल्कि 'नवनीत' को उनके लेख बराबर मिलते रहे, और मुझे उनके निजी पत्र। यह उनका सौजन्य था और मेरा सौभाग्य। बहुत जल्दी वे 'नवनीत' के स्थायी और चाव से पढ़े जाने वाले लेखक बन गये। 'नवनीत' में उन्होंने इतना लिखा कि शायद एक-दो पुस्तकें उससे तैयार हो सकती हैं।

हिन्दी की प्रायः सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में वे खूब छपे हैं। किन्तु मैंने उनमें यह मनोवृत्ति कभी नहीं देखी कि जहाँ मैं छपता हूँ वहाँ मैं ही मैं छपूँ। उलटे उन्होंने अपने अनेक विज्ञान-लेखक मित्रों का मुझसे परिचय कराया और उन्हें मेरे लिए लिखने को प्रेरित किया। डॉ. कृष्ण कुमार गुप्त, श्री प्रेमानन्द चंदोला, श्री प्रमोद जोशी, श्री देवेन्द्र मेवाड़ी आदि लेखक उन्हीं की बदौलत 'नवनीत' से जुड़े। इनमें से डॉ. कृष्ण कुमार गुप्त का मैं सदा ऋणी रहूँगा। उन्होंने 'केजिता' नाम से लगभग पंद्रह साल विज्ञान समाचार का स्तंभ 'नवनीत' में लिखा। यह हिन्दी पत्रकारिता में शायद एक रिकार्ड है। डॉ. शिवगोपाल मिश्र और विज्ञान परिषद् प्रयाग से मेरा स्नेह-संबंध भी रमेश दत्त जी की

कृपा से ही जुड़ा । यह संबंध मेरे लिये अनेक रूपों में फलदायक सिद्ध हुआ है।

किसी फूल की तरह अच्छे लेखन की अपनी खास सुगंध होती है, जिससे वह पहचाना जाता है। साहित्यिक लेखन के लिए ऐसी निजी पहचान सरासर जरूरी है, पर लेखन के दूसरे प्रकारों में भी यह चीज विशिष्टता उत्पन्न करती है। रमेश दत्त जी के लेखन में ऐसी विशिष्टता उठकर दिखती है।

उनकी भाषा में प्रसादगुण भरपूर है। कहीं भी आपको उनके किसी वाक्य का अर्थ समझने के लिए रुकना या दिमाग पर जोर डालना नहीं पड़ेगा। कविता के साथ उनका गहरा लगाव है शायद उसके कारण उनके शब्दचयन में एक स्वाभाविक चारुता रहती है। विषय की प्रामाणिक जानकारी देते हुए भी वे अपने लेख को कोर्सबुक का पाठ नहीं बनने देते। बल्कि सच कहें तो उनके लेख निबंध के बजाय सहज संभाषण जैसे होते हैं। किन्तु इसका ध्यान भी उन्हें बराबर बना रहता है कि विषय में पाठक की रुचि उत्पन्न करना, उसके बारे में अधिक जानने की इच्छा उसमें जगाना सुगम विज्ञान-लेखन की बुनियादी जिम्मेवारियों में से है। इसी कारण वे चुस्त शीर्षक गढ़ने और आकर्षक ढंग से लेख आंरभ और समाप्त करने पर इतना ध्यान देते हैं।

साधारण छात्र या पाठक कितनी जानकारी एक बारी में जज्ब कर सकेगा, इसका सही अंदाज कुशल अध्यापक और कुशल लेखक दोनों के लिए बहुत आवश्यक होता है। दिग्गज संपादक श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने नामी इतिहासकार पं. जयचन्द्र विद्यालंकार की शैली की आलोचना करते हुए एक जगह लिखा था कि वे (पं. जयचन्द्र जी) अपने लेख में इतनी अधिक जानकारियाँ भर देते हैं कि पाठक घबरा जाता है। इस मामले में श्री चतुर्वेदी जी इतिहासकार जदुनाथ सरकार की शैली के प्रशंसक थे।

इस संदर्भ में मुझे बरसों पहले सुना एक किस्सा याद आता है। आठ-नौ साल की एक अंग्रेज बालिका को बत्तखों के बारे में एक पुस्तक दी गयी और उससे कहा गया कि पुस्तक पढ़कर एक वाक्य में लिखना कि वह तुम्हें कैसी लगी। बच्ची ने पुस्तक पढ़कर समाप्त की और उसके अंतिम पन्ने पर लिखा था "This book tells me about ducks more than I want to know." रमेश दत्त जी अपने पाठकों को कभी ऐसा एहसास नहीं कराते ।

इसी तरह पारिभाषिक शब्दों का उपयोग वे बहुत संयम से करते है। 'रीढरहित जीव' कहने से अगर काम चल सकता हो तो वे 'अकशेरुकी' शब्द काम में नहीं लायेंगे। इसी संयम की कमी के कारण, हिन्दी में पारिभाषिक शब्दों के बनाने के साथ-साथ हिन्दी का सुगम विज्ञान-लेखन क्लिष्ट होता जा रहा है। कभी रमेश दत्त जी अपने ही शब्द गढ़ लेते हैं। जेनेटिक इंजीनियरी के लिए 'कीमियागरी' के वजन पर 'जीनियागरी' शब्द शायद उन्हीं का गढ़ा हुआ है। यह सोचकर मुझे अचरज होता है कि पारिभाषिक शब्द गढ़ने के सरकारी कारखाने में वर्षों काम करने के बाद भी ऐसी कल्पनाशीलता वे अपने में कैसे बचाये रख सके!

इन बातों के साथ रमेश दत्त जी को अच्छी आवाज और असरदार व्यक्तित्व का वरदान मिला है, जिसने उन्हें रेडियो और टेलिविजन पर उत्तम संप्रेषक (communicator) बनाया है। कहना पड़ेगा कि दुनिया में जन्म लेने के लिए उन्होंने बड़ा सही समय चुना। अगर वे प्रो. रामदास गौड़ या डा. गोरख प्रसाद के समकालीन होते तो उनकी इन विशेषताओं का पूरा लाभ न उन्हें मिल पाता न हिन्दी को। रमेश दत्त जी के लिखे को पढ़ते हुए कहीं-कहीं मैंने यह महसूस किया है कि प्रतिपाद्य विषय की बुनियादी बातों को समझाने में से वे कुछ अधिक शक्ति लगाते तो अच्छा होता। लेकिन यह लेखक के स्वविवेक का मामला होता है। इसी तरह उनके किसी-किसी लेख का संपादन करते हुए मुझे लगा है कि उसमें व्यक्तिचर्चा, विशेषतः किसी नामी वैज्ञानिक की प्रशंसा कुछ अधिक हो गयी। पर स्वार्थवश मैंने उसे काटा नहीं है। बात यह है कि किसी लेख में आप किसी बड़े वैज्ञानिक की प्रशंसात्मक चर्चा या तस्वीर छाप दें तो आगे किसी परिचर्चा के लिए उसके विचार या किसी विशेषांक के लिए उसका लेख प्राप्त करना आसान हो जाता है । संपादक को इतना चालाक तो होना पड़ता है। इसी युक्ति से तो मैं डॉ. आत्माराम,

शेष पृष्ठ 20 पर

महिमा जासु जाइ नहिं बरनी !

बृजमोहन गुप्त

"आदरणीय........जी नहीं, प्रिय शर्मा जी, आपको जानकर प्रसन्नता होगी कि मेरा स्थानांतरण शिवपुरी से नई दिल्ली हो गया है। दिल्ली, कहते हैं कि, दिल वालों की है। हमें आप जैसे दिलदार आदमी की ही तलाश है। दिल्ली आते ही दो समस्याओं से जूझना होगा। पहली समस्या तो है मकान की। मैं नहीं जानता कि दिल्ली में मकानों की स्थिति क्या है ? मुझे एक सस्ता और बड़ा सा मकान अच्छी लोकेलिटी में चाहिए। खोज-बीन का काम आपका है। यदि एक सप्ताह में मकान खोज लें तो आपको ही सुविधा रहेगी क्योंकि मेरा सामान तो ट्रक में लद ही चुका है। वह एक-दो दिन में रवाना हो जायेगा। यदि आप सही पता नहीं भेज पाये तो जाहिर है ट्रक आपके दरवाजे पर जाकर रुकेगा। ऐसी स्थिति में सामान आपके घर ही उतरेगा। आपको स्वयं के रहने के लिए कहीं अन्य स्थान खोजना होगा। दूसरी समस्या बच्चों की पढ़ाई की है। यहाँ बच्चे केन्द्रीय विद्यालय पढ़ते हैं। जाहिर है दिल्ली में उन्हें मकान के आसपास ही किसी केन्द्रीय विद्यालय में प्रवेश मिलना चाहिए। आशा है आप अपने प्रभाव का प्रयोग कर ये दोनों ....सरलतापूर्वक कर लेंगे। अगर कोई कठिनाई हो तो कृपया हमें सूचित न करें, सारा दायित्व आपका है।

शुभकामनाओं .... सहित आपका ...?"

मुझे नहीं पता श्रीमती शर्मा पर करीब एक दशक पहले लिखे इस पत्र की प्रतिक्रिया क्या रही होगी? शर्मा जी ने तो मारे शर्म के इस विषय पर बातचीत से इंकार कर दिया। बच्चे नहीं माने, उनकी एक बेटी ने उत्साह से बताया कि "पत्र पढ़ कर हम सभी हँसी से लोट-पोट हो गये।" बेटे ने चिंता जाहिर की। पत्र 'चम्बल' की दिशा से आया है, कहीं मामला सचमुच ही गड़बड न हो? "ऐसे दोस्तों से भगवान बचाये" श्रीमती शर्मा की प्रतिक्रिया रही।

डॉ. रमेश दत्त शर्मा से मेरा परिचय विगत 30 वर्षों से है। पहले के लगभग 15 वर्ष हम एक-दूसरे से कभी नहीं मिले। पत्र-पत्रिकाओं में छपे लेखों के आधार पर ही हमारा परिचय रहा है। अपनी पढ़ाई के दौरान ही मैंने डॉ. शर्मा के विज्ञान लेखों को रुचि के साथ पढ़ना प्रारंभ किया और निःसंकोच उन्हीं की शैली में लिखने का प्रयास भी प्रारंभ किया। मुझे याद है उनका एक लेख 'नवनीत डाइजेस्ट' में 70 के दशक में छपा था -"बौने गेहूँ के ब्रह्मा"। किसी वैज्ञानिक की जीवनी किस तरह लिखी जानी चाहिए, वह लेख इस बात का अच्छा नमूना है। ऐसा ही एक और सुंदर लेख है -'माटी का सेव'। आलू की छवि सुधारने में उस लेख का बड़ा योगदान है। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' और 'धर्मयुग' में भी रमेश दत्त शर्मा के विज्ञान लेख निरंतर छपते रहे और हम उन्हें "मजबूरन" पढ़ते रहे। धर्मयुग का एक लेख "सूरज अब आलू भूनेगा" सौर ऊर्जा का लिखा गया एक बढ़िया लेख है। उसी दौर डॉ. शर्मा जी ने अंतरिक्ष विज्ञान पर एक सुंदर लेख "साप्ताहिक हिन्दुस्तान" में लिखा। ब्रह्मांड में सभ्यता की खोज के प्रयास उन दिनों जोरों पर थे। शर्मा जी ने उन सभी खोजों का लेखा-जोखा बहुत ही रोचक शैली में प्रस्तुत किया। लेख के एक पृष्ठ में अंतरिक्ष विज्ञान पर लिखने वाले करीब 25 लेखकों की सूची भी थी। उसी सूची में अपना नाम देखकर मैं दंग रह गया, क्योंकि तब तक शर्मा जी से मेरा सम्पर्क नहीं था। अंतरिक्ष सम्बन्धी अनेक लेख मैंने उस दौर में इंदौर से प्रकाशित दैनिक पत्र "नई दुनिया" में लिखे। सन् 1979 में प्रसिद्ध वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टाइन की जन्म शताब्दी के अवसर पर "नई दुनिया" ने पूरे छः पृष्ठों का विशेषांक मेरी सहायता से निकाला। रमेश दत्त शर्मा उन लोगों में अग्रणी थे जिन्होंने परिशिष्ट प्रकाशन पर बधाई संदेश भेजा।

जवाहर लाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर में सूचना और जनसंपर्क विभाग से जुड़े होने के नाते मुझे सत्तर के दशक में कृषि संबंधी अनेक लेख पत्र-पत्रिकाओं में लिखने पड़े। उस दौरान शर्मा जी भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद दिल्ली में सूचना एवं प्रकाशन विभाग से जुड़े थे। उनके कार्यकाल में प्रकाशित पत्रिका 'खेती और 'कृषि चयनिका' की सामग्री का दुरुपयोग भी जम कर किया।

दिल्ली आने के पहले हमें लोकप्रियकरण का बुखार जमकर चढ़ चुका था। एक स्वयंसेवी संस्था 'साइंस सेंटर ग्वालियर' के माध्यम से हम पूरे चम्बल इलाके में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के प्रयास में जुटे थे। स्कूलों, कालेजों के अलावा किसानों के बीच भी काम चला। बीहड़ की समस्या डाकुओं की समस्या नहीं है। चम्बल की घाटी में भू-क्षरण की समस्या के कारण बीहड़ बन रहे हैं। ग्रामीण अपने निजी प्रयासों से इसे रोकने में मदद कर सकते हैं। जब इस विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित करने का फैसला हुआ तो शर्मा जी ने भरपूर सामग्री उपलब्ध कराई। विषयविशेषज्ञों के नाम भी सुझाये।

विज्ञान पत्रकारिता और विज्ञान लेखन कार्यशालाओं का आयोजन जब भी हमने किया रमेश दत्त शर्मा सहर्ष उनमें सम्मिलित हुए। नवलेखकों और युवा पत्रकारों के बीच अपने "ट्रेड सीक्रेट्स" बाँटने वाले लोग विरले ही होते हैं। शर्मा जी उन्हीं में से एक हैं।

आकाशवाणी दिल्ली के विज्ञान एकांश का प्रभारी होने के नाते मुझे रमेश दत्त शर्मा की सेवाओं की आवश्यकता सदैव रही। 'संकटमोचन वार्ताकारों' की सूची में उनका शीर्ष पर रहा। विज्ञान का कोई भी विषय और लिखने के लिए कितना ही कम समय क्यों न हो शर्मा जी सहर्ष तैयार मिले। आकाशवाणी के किसी भी एकांश में वे क्यों न आये हों मुझसे मिले बिना चले गये हों, ऐसा शायद ही हुआ है।

डॉ.रमेश दत्त शर्मा का विज्ञान लेखन संप्रेषणीयता के सभी मानदण्डों पर खरा उतरता है। रोचकता बनाये रखने के सभी नुस्खे उन्हें ज्ञात हैं । जनसंचार विशेषज्ञों का मानना है कि पाठक को किसी लेख के पढ़ने से 'पुरस्कार की आशा' जितनी अधिक होगी पठनीयता उतनी ही बढ़ेगी। पुरस्कार से आशय है जीवन की मूल आवश्यकताओं - रोटी, कपड़ा, मकान-की पूर्ति में सहायक सामग्री, सुरक्षा, सामाजिक मान-सम्मान, आत्मसम्मान और आत्मतुष्टि जैसे जरूरतों की पूर्ति । डॉ. शर्मा के अधिकांश लेख इन्हीं प्रेरणाओं के इर्द-गिर्द घूमते हैं। इसी प्रकार संप्रेषणीयता में बाधक तत्वों में प्रमुख हैं पढ़ने में लगने वाला श्रम। सहज शब्दावली, छोटे-छोटे वाक्य और नन्हें पैराग्राफ लिखने में डॉ. शर्मा का मुकाबला करने वाले लेखक कम ही हैं। सचित्र लेखन के विशषज्ञों में भी उनका नाम सम्मिलित है।

रेडियो लेखन एक कठिन विधा है । डॉ. शर्मा उसमें भी पारंगत हैं। उनकी वार्ताएँ सुनते ही बनती हैं। कठिन से कठिन बात को सहजता से कह जाना उन्हीं के वश की बात है। आँकड़ों की नीरसता को उपयुक्त बिम्बों में बदल देने में वे पारंगत हैं। "दुनिया की पूरी आबादी के वंशाणु यदि समेटे जाँय तो वे एक चम्मच में समा जायेंगे। यदि उनके तार खींचकर एक दूसरे से जोड़ दें तो वह तार धरती से चंद्रमा तक की परिक्रमा कर वापिस आयेगा।" कुछ ऐसी ही शब्दावली का प्रयोग कर वे श्रोताओं को बाँधे रखने में सिद्धहस्त हैं। यही कारण है कि 'आकाशवाणी पुरस्कार' पाने वाले चंद बाहरी व्यक्तियों में डॉ. रमेश दत्त शर्मा प्रमुख हैं। आकाशवाणी का सबसे लम्बा धारावाहिक 'मानव का विकास' हो या अंधविश्वासों के विरुद्ध जागरूकता बढ़ाने वाला धारावाहिक 'छूमंतर' लगता ही नहीं कि डॉ. शर्मा रेडियो में काम करने वाले नियमित प्रस्तोता नहीं हैं। यही हाल दूरदर्शन पर प्रसारित 'कृषि दर्शन' कार्यक्रम का है। हमारे बच्चे उस कार्यक्रम को 'डॉ.रमेश दत्त शर्मा दर्शन' कार्यक्रम कहकर अक्सर छेड़ते हैं। डॉ. स्वामीनाथन से लेकर राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय कृषिविशेषज्ञों तक हिन्दी और अंग्रेजी में समान अधिकार से बात करने में उनका जबाब नहीं है। साक्षात्कार की विधा को 'बातचीत की विधा' में बदलने में उन्हें क्षणभर नहीं लगता। 'कैमरा हितैषी' चेहरा तो उनके पास है ही।

डॉ. रमेश दत्त शर्मा की युवावस्था का चित्र 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में एक महिला की युगलबंदी में छपा था। श्रीमती शर्मा भले ही 'बदल' गयी हों, डॉ. शर्मा ठीक वैसे ही हैं। लम्बे और बिखरे बाल, चेहरे पर लम्बी और शरारती मुस्कान, आत्मीय और सहज व्यवहार उनकी पहचान है।

आकाशवाणी के कर्मचारी प्रशिक्षण संस्थान (कार्यक्रम) में उपनिदेशक के रूप में मुझे नये कार्यक्षेत्र में उतरना पड़ा। डॉ. रमेश दत्त शर्मा यहाँ भी हमारी सहायता के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। कार्यक्रम अधिकारी हों या केन्द्र निदेशक, सभी को सम्मोहित करने की कला उन्हें आती है। रोचक प्रस्तुतिकरण और दोतरफा संवाद के लिए उन्हें याद किया जाता है।

डॉ. रमेश दत्त शर्मा अच्छे कवि भी हैं। अनेक विज्ञान कविताएँ और रोमानी ग़ज़लें उन्होंने लिखी हैं। माखन लाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल में आयोजित एक विज्ञान पत्रकारिता कार्यशाला में हम लोग साथ-साथ रहे। एक शाम उन्होंने इतनी रचनाएँ सुनाईं कि मुझे मजबूरन उन्हें कवि-शायर मानना पड़ा। उसी दौरान उन्होंने सगर्व बताया कि डॉ. हरिवंश राय बच्चन ने उनकी रचनाएँ सुनीं और एक नेक सलाह दी कि भैया ! विज्ञान लेखन पर ही ध्यान दो तो हिन्दी साहित्य का भला होगा। 'गुस्ताख़' शर्मा जी ने उनकी सलाह अनुसुनी कर एक कविता संग्रह की पांडुलिपि तैयार कर रखी है और सुना है उसका शीर्षक 'गुस्ताखी' ही है। यह बात और है कि इस गुस्ताखी के लिए तैयार करने में मेरा भी विनम्र योगदान है।

डॉ. रमेश दत्त शर्मा का एक और प्रमुख गुण है विनम्रता । 'न' शब्द तो शायद उन्हें बारहखड़ी पढ़ाते समय शिक्षकों ने छोड़ दिया होगा। इसका सुफल उनके मित्र झेल रहे हैं। हर बात के लिए 'हाँ' कह देने के बाद शर्मा जी तब तक प्रतीक्षा कराने में सिद्धहस्त हैं जब तक कि आपका रक्तचाप ख़तरे की सीमा को पार न कर ले। संभवतः इसका कारण यही है कि वे अंतिम क्षण तक अपने 'कमिटमेंट' को पूरा करने का प्रयास करते हैं। साठ साल के बाद किसी को 'सुधरने' का परामर्श देने वाला व्यक्ति 'आशावादी' ही माना जायेगा।

डॉ. रमेश दत्त शर्मा के व्यक्तित्व को उजागर करने के लिए तो बहुत सी 'गुप्त' बातें हैं किन्तु किसी ने ठीक ही कहा है- 'जो शीशे के घर में रहते हैं वे बत्ती जलाकर कपड़े नहीं बदलते' और मैं यह ख़तरा मोल नहीं लेना चाहता। सौभाग्य से बड़े भाई फिर बच निकले । बधाई।

एन-4 परवाना विहार

सेक्टर-9, रोहणी

नई दिल्ली-110085

पृष्ठ 17 का शेष.......

डॉ. स्वामिनाथन् , डॉ. मशेलकर जैसे बड़े वैज्ञानिकों के लेख प्राप्त कर सका हूँ, सो भी प्रायः रमेश दत्त जी के जरिये। यों भी यह नियम कि व्यक्तिचर्चा संक्षिप्त और तटस्थ होनी चाहिए, केवल वैज्ञानिकों और विद्वानों के मामलों में ही क्यों लागू किया जाये? राजकाज, साहित्य, खेल और फिल्म से जुड़े लोगों के मामले में क्यों नहीं?

ये तो हुए विज्ञान-लेखक डॉ. रमेश दत्त शर्मा के सम्बन्ध में एक सम्पादक के तौर पर मेरे विचार और अनुभव। लेकिन इनसे परे उनके व मेरे सम्बन्धों की एक अलग दुनिया भी है, जिसमें वे मेरे लिए सिर्फ रमेश हैं और मैं हूँ उनका 'भाई साहब', उनके बच्चों का 'ताऊजी' और उस परिवार की तीसरी पीढ़ी का दादा-नाना। कामकाज के सिलसिले में शुरू हुआ सम्बन्ध किन कीमियाई प्रक्रियाओं से आत्मीयता में बदल जाता है, यह एक रहस्य है। इसकी रहस्यमयता मानवीय सम्बन्धों को स्निग्ध और स्पृहणीय बनाये रखने में सहायक ही है, बाधक नहीं।

239, छठा मेन

ब्लॉक-IV जया नगर

बंगलौर-560011

डॉ॰ रमेश दत्त शर्मा :

अन्तर्राष्ट्रीय कृषि विज्ञान में लेखकीय योगदान

डॉ॰ अनुपम वर्मा

डॉ. रमेश दत्त शर्मा से मेरा परिचय करीब 30 वर्ष पहले, मेरी पत्नी के पिताजी स्व. डॉ. बाबूराम सक्सेना जी ने कराया था। उस समय डॉ. सक्सेना जी केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय में वैज्ञानिक शब्दावली आयोग के अध्यक्ष बनकर आये थे। डॉ. सक्सेना जी हिन्दी भाषा विज्ञान के विद्वान थे और उनसे शर्मा जी की घनिष्टता थी। उन्होंने मुझे बताया था कि शर्मा जी हिन्दी के शीर्षस्थ विज्ञान लेखकों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। डॉ. शर्मा जी के विचारों से मैं पहली ही मुलाकात में बहुत प्रभावित हुआ था।

उन दिनों, डॉ. शर्मा जी भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में हिन्दी के प्रकाशन विभाग में प्रधान संपादक थे। उन्होंने मुझे पौधों के विषाणु विज्ञान पर एक पुस्तक लिखने का प्रस्ताव भिजवाया। मैंने उनके विशेष आग्रह पर यह प्रस्ताव स्वीकार तो कर लिया लेकिन मैं उसे कभी पूरा नहीं कर पाया, इसका मुझे आज भी खेद है।

डॉ. शर्मा की वैज्ञानिक पत्रकारिता की प्रवीणता को निकट से देखने का अवसर मुझ तब मिला, जब मैंने उन्हें कृषि विज्ञान संबंधी अनेक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में मीडिया कमेटी के सदस्य या अध्यक्ष के रूप में काम करते देखा। जहाँ तक मुझे याद आता है सबसे पहले उनके साथ इण्टरनेशनल प्लांट फिजियालॉजी कांग्रेस में काम करने का मौका मिला। मैंने उन्हें बताया कि बजट बहुत कम है। उन्होंने कहा कि ठीक है हम इसी बजट के अंदर काम करेंगे। उस समय उन्होंने 'हरीतिमा' नाम से उस विज्ञान-सम्मेलन के उद्घाटन समारोह तथा प्रमुख व्याख्यानों का और शोध-पत्रों का लोकप्रिय विवरण देने वाला 'टेबलॉइड' निकाला। इसमें आचार्य जगदीश चन्द्र बसु की जीवनी और उनके कार्य के बारे में अल्पज्ञात सामग्री प्रकाशित की गयी थी। इससे पहले 'इंडियन सोसाइटी ऑफ जेनेटिक्स एण्ड प्लांट ब्रीडिंग' के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों को भी मीडिया कवरेज प्रदान कर चुके थे। इस सोसाइटी के स्वर्ण जयंती सम्मेलन के लिए उन्होंने 'आनुवंशिकी' नाम से टेबलॉइड निकाला था। प्लांट फिजियोलोज़ी कांग्रेस में मैंने देखा कि जटिल वैज्ञानिक व्याख्यानों में से भी शर्मा जी ऐसे चुटीले शीर्षक और चटपटी सूचना वाले विषय छाँट लेते हैं जो उन पाठकों को भी आकर्षित करते हैं जिनका विज्ञान से कोई सम्बन्ध नहीं है। उदाहरण के लिए 'चन्द्रमा पर खेती' नाम से एक समाचार उन्होंने बनाया जो सबसे अधिक छपा था, और उस अमरीकी वैज्ञानिक को मीडिया ने हाथों हाथ लिया जिसने इस विषय पर अपने प्रयोगों का विवरण देते हुए शोध-कार्य प्रस्तुत किया था।

सबसे अधिक हमारी घनिष्ठता हुई दूसरी इंटरलेशनल क्रॉप साइंस कांग्रेस के समय, जब हर रोज 'शस्य श्यामला' नाम से अंग्रेजी में टेबलॉइड छपता था। शर्मा जी की टीम आधी रात को उसे प्रेस भेजती और सुबह 'शस्य श्यामला' सभी वैज्ञानिकों के हाथों में होती थी। इस सम्मेलन का उद्घाटन समारोह दूरदर्शन ने सीधा प्रसारित किया था।

मैंने जब प्लाण्ट पैथोलोजी पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया तो वह इतने बड़े पैमाने पर नहीं किया गया था। हमारे पास इतने साधन नहीं थे फिर भी शर्मा जी ने अपने एक साथी पत्रकार की ड्यूटी लगा दी और वह रोज किसी न किसी वैज्ञानिक का इंटरव्यू ले करके प्रेस रिलीज़ भेजता रहा और रेडियो तथा कृषि दर्शन में

इस सम्मेलन को भी पूरा कवरेज मिला। मैंने देखा कि खास तौर से विज्ञान और कृषि के सभी पत्रकार शर्मा जी के बहुत निकट हैं। होने भी चाहिए क्योंकि डॉ. शर्मा के प्रयासों से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने 'खेती पुरस्कार', 'डॉ. राजेन्द्र प्रसार पुरस्कार' तथा 'चौधरी चरण सिंह कृषि पत्रकारिता पुरस्कार' शुरू किये। आखिरी पुरस्कार एक लाख रुपये का है और पिछले दो सालों से ही शुरू हुआ है। इसे शुरू कराने में शर्मा जी ने किस तरह तत्कालीन कृषि मंत्री श्री सोमपाल जी की सहायता ली, यह मुझे याद है। मैं तब नेशनल एकेडमी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज का सेक्रेटरी था। शर्मा जी अकादमी के समारोह में आया करते थे।

इससे पहले संयुक्त राष्ट्र के फूड एण्ड एग्रीकल्चरल ऑर्गेनाइजेशन (एफ.ए. ओ.) ने 16 अक्टूबर को विश्व खाद्य दिवस पर हिन्दी, अंग्रेजी के सर्वश्रेष्ठ कृषि पत्रकार, कृषि संबंधी सर्वश्रेष्ठ रेडियो कार्यक्रम, सर्वश्रेष्ठ टी.वी. कार्यक्रम, सर्वश्रेष्ठ कृषि फिल्म तथा सर्वश्रेष्ठ कृषि पोस्टर पर पुरस्कार देना शुरू किया था। यह सारी योजना भी मुझे पता चला कि शर्मा जी ने ही बनाई थी। एफ.ए.ओ. के भारतीय कार्यालय में उनका आना जाना था। अनेक बार वे भारत में एफ.ए.ओ. के कार्यकलापों पर फीचर लिख चुके थे। जब विश्व खाद्य दिवस मनाने की बात चली तो रोम से यह सुझाव आया था कि सर्वश्रेष्ठ उत्पादन करने वाले किसान छाँटकर उन्हें पुरस्कृत किया जाए, लेकिन केन्द्रीय कृषि मंत्रालय के ऐसे ही पुरस्कार 'कृषि पंडित' को तत्कालीन कृषि मंत्री राव वीरेन्द्र सिंह बंद करवा चुके थे। राव साहब के सामने जब 'कृषि पंडित' के पुरस्कार के लिए प्रत्याशियों के द्वारा भेजे गये और कृषि अधिकारी द्वारा प्रमाणित उपज के आँकड़े रखे गये तो उन्होंने तुरंत कह दिया कि इतनी उपज हो ही नहीं सकती। जाँच की गयी तो उनका शक सच निकला। लोग झूठे आँकड़े भेज-भेज कर 'कृषि पंडित' की पदवी ले रहे थे। शर्मा जी ने यह सारी कहानी एफ.ए.ओ. के भारतीय कार्यालय के तत्कालीन प्रतिनिधि को समझाई और इस तरह हर साल विश्व खाद्य दिवस पर कृषि का मीडिया पुरस्कृत होने लगा। जब तक शर्मा जी इसकी कमेटी में रहे, छाँट-छाँटकर सभी कृषि पत्रकारों को इस पुरस्कारों से सम्मानित कराया जिनमें देवेन्द्र शर्मा, वेंकटरमणी, सुरेन्द्र सूद, अरविंद घोष, देवेन्द्र उपाध्याय, चौ. रघुनाथ सिंह (कृषि दर्शन), श्री हंसराज नायक (कृषि दर्शन), जय राज (यू.एन. आई.) इत्यादि शामिल हैं।

संयुक्त राष्ट्र के विश्व स्वास्थ्य संगठन के नई दिल्ली स्थित दक्षिण एशिया कार्यालय में भी हिन्दी का प्रवेश डॉ. रमेश दत्त शर्मा के प्रयत्नों से हुआ। यह तब की बात है जब वहाँ एक फ्रेंच पत्रकार जन सम्पर्क का काम देखते थे। शर्मा जी हर साल 7 अप्रैल को 'विश्व स्वास्थ्य दिवस' पर जो भी विवरण होता उस पर 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान" आदि पत्रिकाओं में लेख लिखते थे। इस तरह श्री कार्ल फ्रुक्त हिन्दी में प्रकाशित समाचारों और लेखों से इतना प्रभावित हुआ कि उसने श्री नवल टाटा से अनुदान लेकर दो साल तक 'वर्ल्ड हेल्थ' पत्रिका को शर्मा जी के सहयोग से हिन्दी में प्रकाशित कराया।

इतने अन्तर्राष्ट्रीय अनुभव के बाद डॉ. शर्मा को ब्रिटेन की नामी-गिरामी संस्था सी.ए.बी. इण्टरनेशनल ने अगर भारत में अपना 'प्रोग्राम कोओर्डीनेटर' चुना तो इससे अच्छा कोई और चयन नहीं हो सकता था। डॉ. शर्मा तब तक आई.सी.ए.आर. के डाइरेक्टर (पब्लिकेशंस एण्ड इनफोर्मेशन) के पद से रिटायर हो चुके थे। इस संस्था ने शर्मा जी के बारे में मेरी राय माँगी। मैंने इनके बारे में ई-मेल से अपनी राय भेज दी कि इस कार्य के लिए शर्मा जी से अधिक उपयुक्त कोई और व्यक्ति नहीं है।

शर्मा जी ने विज्ञान और कृषि पत्रकारिता को इस देश में आगे बढ़ाने को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया है। आप भारतीय विज्ञान लेखक संघ के अध्यक्ष हैं और मुझे भी उसका आजीवन सदस्य बना लिया है।

मैं विज्ञान परिषद्, प्रयाग को इसके लिए बधाई देना चाहता हूँ कि कृषि विज्ञान के इस मूल सेवक के लिए उन्होंने 'विज्ञान' का विशेषांक निकाला और मुझे उनके साथ बीते क्षणों को याद करने का अवसर दिया।

राष्ट्रीय प्राध्यापक
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
नई दिल्ली-110012

किसानों के लिए समर्पित - आर० डी०

देवेन्द्र शर्मा

सड़कों और गलियों में सेना के टैंक घूम रहे थे। हर मोड़ और चौराहे पर सशस्त्र सैनिक चौकसी कर रहे थे और जब मैं मनीला के हवाई अड्डे से कोई 60 कि.मी. दूर धान अनुसंधान के विश्व प्रसिद्ध सर्वश्रेष्ठ केन्द्र - इण्टरनेशनल राइस रिसर्च इन्स्टीट्यूट (इर्री) पहुँचा तो हर जगह घोर सन्नाटा छाया हुआ था - तनाव भरा मौन।

फिलिपीन्स एक सैनिक विद्रोह से घिरा हुआ था।

एक दिन बाद वहाँ डॉ. आर. डी. शर्मा से मिलवाया गया कि भारत से आये हैं और विज्ञान के लेखक हैं। वे वहाँ धान पर एक लोकप्रिय पुस्तक लिखने के लिए विजिटिंग एडीटर की हैसियत से आये हुए थे। बाद में मैं उन्हें बस आर.डी. कहकर ही बुलाया करता था। ऐसा नहीं कि मैं उनके नाम से परिचित नहीं था। हिन्दी की शायद ही कोई नामी-गरामी पत्र-पत्रिका होगी, जिसमें उनके रोचक वैज्ञानिक लेख न छपते रहे हों। शायद जब से मैंने विज्ञान और प्रौद्योगिकी को समझना शुरू किया, तभी से मैं उनके लेख पढ़ रहा हूँ। उस समय मेरे ऊपर उनका जो असर पड़ा और जिस बात ने मुझे उनका कायल बना दिया और आज भी हूँ, वह है विज्ञान की भारी से भारी जटिलताओं को आम आदमी के लिए एकदम सुबोध, सुपाच्य और हलका बना देना। इससे भी बड़ी बात है, उनकी बेहद सादगी और दिखावे से दूरी और घमण्ड नाम को भी नहीं।

पहली मुलाकात के घण्टे भर में ही उन्होंने मुझे बता दिया कि उस अंतर्राष्ट्रीय संस्थान में क्या-क्या हो रहा है। अगले कुछ महीनों तक हम दोनों एक ही कमरे में बैठकर काम करते हुए धान-अनुसंधान को अपने-अपने नजरिये से निरखते-लिखते रहे। वे लेखक और मैं पत्रकार, मगर हम अक्सर साथ-साथ उठते-बैठते और वहाँ के लोग इण्डिया से आये डी. शर्मा और आर. डी. शर्मा में सिर्फ आर. का अन्तर पाकर भौंचक रह जाते। मैं तो धान-अनुसंधान के वैज्ञानिक ब्यौरों में से समाचार बनाने की उधेड़बुन में लगा रहता और आर.डी. उसे सामाजिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक ही नहीं बल्कि पौराणिक आख्यानों और लोककथाओं में से भी खँगालते रहते। उसका महत्व, सार्थकता और भविष्य सब कुछ उनकी कलम का विषय बन जाता है।

उस समय मैं इण्डियन एक्सप्रेस से जुड़ा युवा कृषि पत्रकार था, और मुझे आर. डी. से जो सहारा मिला, वह मैं कभी भुला नहीं सकता।मैंने देखा कि यहाँ भी वे विज्ञान को अधिकाधिक सरल बनाने के लिए बड़ी गहरी तलाश में रहते कि उसे सरस और सुस्वादु कैसे बनायें। इस तरह हम दोनों की निकटता बढ़ी। उन्होंने मुझसे अपनी पहली मुलाकात के बारे में बताया था कि जब मुझे विश्व खाद्य दिवस पर एफ.ए.ओ. का अंग्रेजी में श्रेष्ठ कृषि पत्रकारिता का पुरस्कार मिला तो उस समय हमारी पहली भेंट हुई थी । तब वे चौंक पड़े थे कि मैं बहुत कम उम्र का था, जब कि वे सोचते थे कि कोई बूढ़ा नहीं तो अधेड़ आदमी मैं जरूर रहा हूँगा। मैंने इस बात को अपने लेखन की प्रौढ़ता का प्रमाण मानकर खुशी मनाई। वे जब भी मिलते तो मेरी लिखी रचनाओं का जिक्र करना न भूलते, जिनमें से बहुतों की कतरनें (क्लिपिंग) आज भी उन्होंने संभालकर रखी हैं, जो शायद मेरे पास भी न मिलें।

हिन्दी के संचार माध्यमों - प्रेस, रेडियो, टी.वी. में मैंने उनकी अच्छी खासी धाक देखी। अकेले आर.डी. ने जिस तरह कृषि विज्ञान की नई से नई जानकारी को किसानों तक पहुँचाने में योगदान दिया है, उसका कोई जबाब नहीं है। दूर-देहात तक लोग उनके कृषि दर्शन के समाचारों के समय कलम-कागज लेकर बैठा करते थे।

हमारे देश में लोग जब हरित क्रांति का जिक्र करते हैं तो उसमें मीडिया के योगदान को प्रायः अनदेखा कर देते हैं कि किस तरह नई खोजों की जानकारी मीडिया ने प्रयोगशालाओं से खेतों तक पहुँचाई और आर. डी. ने तो हरित क्रांति के बीज बोये जाते देखे हैं, उनको अंकुराते और पनपते तथा फलते-फूलते देखा है। उन्होंने अपनी कलम से सीधे किसानों तक किसानों की अपनी भाषा में उन किस्मों और तकनीकों के बारे में जमकर लिखा जो अंततः हरित क्रांति की जननी बनीं। लिखा ही नहीं रेडियो और दूरदर्शन से उन्हें खूब प्रसारित किया- ऐसी जानकारी परोसी जो किसानों के मतलब की थी - उनके काम की थी।

असल में डॉ. आर. डी. शर्मा हरित क्रांति के ऐसे हीरो रहे हैं जिनका सही मूल्यांकन नहीं हुआ और न वह मान्यता मिली, जो इस योगदान के लिए उन्हें मिलनी चाहिए थी। बीसवीं सदी में भारत की सबसे बड़ी सफलता-गाथा एक ही है - हरित क्रांति, जिसमें उनका योगदान किसानों की अपनी भाषा हिन्दी में सबसे अधिक और सबसे ऊपर रहा है। मैं समझता हूँ कि भारत के कृषिवैज्ञानिक डॉ. शर्मा के इस महान योगदान की जो कद्र होनी चाहिए थी, वह नहीं कर पाये।

अब भी आर. डी. उसी संकल्प और दृढ़ता के साथ विज्ञान में निरंतर हो रही प्रगति को खेतों में किसानों तक और आम आदमी तक पहुँचाने में जुटे रहते हैं। उन्होंने मेरी तरह पत्रकारिता का रास्ता छोड़कर विज्ञान के विशेषज्ञों की पंक्ति में जा बैठने की कभी कोशिश नहीं की । मैंने देखा कि वे किस तरह जब किसी विषय पर लिखते हैं तो उसकी हर बारीकी को पकड़कर गहराई में जाने की पूरी कोशिश करते हैं। इतने दिनों से वे भारतीय विज्ञान, खास तौर से कृषि विज्ञान के सभी धुरंधरों के अत्यंत निकट रहे हैं और सरकारी नीतियों को तथा अनुसंधान की योजनाओं को बहुत नजदीक से बनते-बिगड़ते देखा है। वे चाहते तो बड़े आराम से इन नीतियों के समीक्षक के रूप में अपनी विशेषज्ञता स्थापित कर सकते थे।

आर. डी. कृषि अनुसंधान से तो हरित-क्रांति से पहले के दिनों से ही जुड़े रहे हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के प्रकाशन विभाग में आने से पहले वे पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय में थे और पूसा इन्स्टीट्यूट में डॉ. बी. पी. पाल तथा डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन से कृषि पत्रकार के रूप में उनके घनिष्ट संबंध तभी से बन गये थे, जब डॉ. स्वामिनाथन बॉटनी डिवीजन में अध्यक्ष थे। इसीतरह उस जमाने के विख्यात वनस्पतिवेत्ता प्रो. पी. महेश्वरी से भी उनकी पारिवारिक मित्रता थी और दिल्ली विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसरों से लिए गये उनके साक्षात्कारों ने 'धर्मयुग' के माध्यम से धूम मचा रखी थी।

विश्व के बदलते परिदृश्य में आर. डी. यह मानते हैं कि विज्ञान पत्रकारिता और विज्ञान लेखन का स्वरूप बदलना चाहिए। जनता की नई आकांक्षाओं, माँगों और जरूरतों के अनुसार यह परिवर्तन आवश्यक है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानिक अनुसंधान के तमाम समझौते होते रहते हैं, फिर चाहे हमारे देश की आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं से उनका कोई सरोकार हो या न हो। इनकी गहरी समीक्षा करके इनके बारे में जनता की राय बनाने का काम कितने विज्ञान लेखक कर पा रहे हैं? आर. डी. पिछले चार वर्षों से भारतीय विज्ञान लेखक संघ के अध्यक्ष हैं और दो सालों से 'साइंस कम्यूनीकेशन कांग्रेस' संस्था के वार्षिक अधिवेशन के रूप में आयोजन कर रहे है। लेकिन यहाँ भी वे वह नहीं कर पा रहे जो वे कर सकते हैं और उन्हें करना चाहिए। इसका उन्हें बहुत दुख है। वस्तुतः वे चाहते हैं कि विज्ञान लेखकों की एक ऐसी पीढ़ी तैयार हो जाये जो विज्ञान से खिलवाड़ करने वालों को आड़े हाथों ले और वैज्ञानिक कार्यक्रमों का देश की अर्थव्यवस्था तथा जन-कल्याण से कितना संबंध है, इसकी गहरी समझ रखती हो।

कृषि नीति विशेषज्ञ
7, त्रिवेणी अपार्टमेंट
ए-6, पश्चिम विहार
नई दिल्ली-110063

डॉ०रमेश दत्त शर्मा : सहपाठी, मित्र और विद्यार्थी

गणेश शंकर पालीवाल

रमेश दत्त शर्मा का नाम मस्तिष्क पटल पर आते ही एक ऐसे व्यक्तित्व की छवि सम्मुख आती है, जिन्होंने मेरे जीवन के कई पहलुओं को छुआ, प्रभावित किया और कई रूप में सहभागिता करते हुए हम अग्रसरित होते रहे।

हमारी परिचय-अवधि को अब तक लगभग 45 वर्ष बीत चुके हैं। बात 1957-1959 के एम.एस-सी. वनस्पति विज्ञान पाठ्यक्रम की है जब हम सहपाठी के रूप में अध्ययनरत थे लेकिन आगरा स्थित, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा के दो भिन्न-भिन्न महाविद्यालयों में। मैं आगरा कालेज, आगरा का विद्यार्थी था और वे बलवन्त राजपूत कॉलेज आगरा के। और जैसी कि उन दिनों स्थिति थी, मात्र कुछ ही शाखाओं के विशेषज्ञ प्राध्यापक किसी भी विभाग में विद्यमान होते हैं।आगरा कालेज, आगरा का वनस्पति-विज्ञान विभाग विश्वविख्यात पादप रोगविद् डॉ. करम चन्द्र मेहता,(जिन्होंने **पक्सीनिया ग्रामिनिस** *(Puccinia graminis)* नामक किट्ट के वर्ष प्रतिवर्ष देश के मैदानी भागों में गेहूँ की फसल को प्रभावित करने के सम्बन्ध में अपने विलक्षण प्रयोगों द्वारा उदाहरणार्थ पतंग उड़ाकर बीजाणुओं को वायु से एकत्र करने की विधि खोजी) के काल के कवक-विज्ञान एवं पादप-व्याधिविज्ञान के लिए विख्यात था और पादप शरीर क्रियाविज्ञान (Plant Physiology) की पठन सामग्री (Notes) बनाकर आपसी आदान-प्रदान का कार्यक्रम चलता रहा जिससे हम दोनों को ही पर्याप्त लाभ हुआ लेकिन इससे भी बड़ा सुखद अनुभव तब हुआ जब हमें पता चला कि हमारी भावी संगिनियाँ भी आगरा के कॉलेजों की ही छात्राएँ थीं।

एम. एस-सी. की पढ़ाई पूरी कर रमेश जी ने कुछ काल तक अध्यापन और फिर केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, शब्दावली आयोग, नई दिल्ली में वनस्पति विज्ञान के एकक में पद ग्रहण कर अपनी एकाग्रता, लगन और हिन्दी के प्रति समर्पण द्वारा अभूतपूर्व योगदान दिया और देश के उच्च कोटि के वनस्पतिज्ञों के सम्पर्क में आये। इसका एक अन्य प्रमुख कारण उनकी लेखनी से सतत् 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'नवभारत टाइम्स', 'दैनिक हिन्दुस्तान' एवं अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले विविध लेख रहे जो, अपनी सरल भाषा अभिव्यक्ति के पैनेपन और पाठक के मानस पर सीधी छाप छोड़ने की पटुता में हिन्दी की वैज्ञानिक पत्रकारिता के शैशव काल में मील के पत्थर साबित हुए। विषय विशेषज्ञों के साथ साक्षात्कार अथवा उनसे अर्जित ज्ञान को अपनी भाषा में पाठकों को पढ़ने के लिए विवश कर देना, अपने आप में उस काल की बड़ी उपलब्धि रही क्योंकि इनमें से कुछ तो इतने सटीक ठहराए गये कि पाठकों ने अंग्रेजी के साथ स्पष्ट विवेचन हेतु हिन्दी के समकालिक लेख भी पढ़े।

मैं भी बीरबल साहनी वनस्पति-विज्ञान संस्थान लखनऊ में कुछ माह तक प्रारंभिक शोधकार्य कर अग्रगण्य भारतीय वनस्पतिज्ञ प्रो.पंचानन महेश्वरी के आमंत्रण पर वनस्पति-विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली में एक शोध छात्र के रूप में प्रवेश पा गया और इस प्रकार हमारी जोड़ी फिर जम गयी तथा उनकी अधिकतर 'शामें' मेरे साथ वनस्पति-विज्ञान प्रयोगशाला में बीतने लगीं। फलतः उनकी शोध के प्रति ललक बढ़ी, विशेषतः इसलिए कि वे (और मैं भी) उस अवसर की खोजों के प्रति लालायित थे जब प्रो. महेश्वरी द्वारा इंगित विषय पर वे एक लेख लिखें, और हम दोनों इसे उन्हें दिखाकर उनका गरिमामय

आशीर्वाद अर्जित करें। अंततः हमें प्रो. महेश्वरी से साक्षात्कार का अवसर मिला और उन्होंने पहले प्रो. ब्रजमोहन जौहरी द्वारा सुझाये लेख 'रैफलेसिया आर्नोल्डाई' विश्व का सबसे बड़ा पुष्पधारी पादप की रचना की और फिर प्रो. महेश्वरी द्वारा बताई सामग्री के आधार पर "जब कपास ने इतिहास बुना" की, और इस प्रकार हम दोनों की ख्याति 'विज्ञान में हिन्दी के पक्षधर' के रूप में फैल गयी। प्रो. महेश्वरी कभी-कभी अप्रसन्न रहते थे, क्योंकि वे आग्रहपूर्वक सरल से सरल भाषा का प्रयोग चाहते थे। फलतः एक बार मेरे लेख को पढ़कर खिन्न होते हुए उन्होंने कहा था : तुम्हारी हिन्दी को गड्ढे में गाड़ देंगे और 20 साल तक बाहर नहीं निकलने देंगे। पता नहीं रमेश जी ने पूर्व संध्या में हिन्दी के प्रति कितनी ऊर्जा भर दी थी कि मैंने डरते-डरते कहा कि "हम भी 6 माह में आपको हिन्दी में भाषण करने के लिए बाध्य कर देंगे।" यह गुरु-शिष्यों की अभूतपूर्व आपसी चुनौती थी, जो सभी विभागीय शोध-छात्रों / अध्यापकों / कर्मचारियों के लिए कौतूहल का विषय बन गयी और मैं सदैव जागरूक होकर सोचता रहा कि चुपचाप लेखन जारी रखो, एक न एक दिन सफलता मिलेगी। सौभाग्य से चर्चा के ठीक 3 माह बाद प्रो. महेश्वरी ने हम दोनों को बुला भेजा था, हिन्दी में कुछ काम करने के लिए। वस्तुतः उन्हें राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, इलाहाबाद ने उस विशिष्ट वर्ष के लिए सभापति चुना था और साथ ही यह आग्रह भी किया था कि वे अपना भाषण हिन्दी में प्रस्तुत करें। यह गरिमामय उत्तरदायित्व हमें सौंपा गया, जिसे पूरा कर हमने प्रो. महेश्वरी को सौंपा तो हमारी स्थिति उन खिलाड़ियों की भाँति थी जिन्होंने हाल ही में एक बड़ा 'मैच' जीता हो।

और फिर दो बड़े काम प्रारंभ हुए-एक तो 'प्राचीन भारत में वनस्पति-विज्ञान' नामक प्रो. पी. महेश्वरी एवं प्रो. आर. एन. कपिल द्वारा रचित A History of Botany in India का रूपान्तर और उससे भी कहीं दुरूह चुनौती थी, प्रो. महेश्वरी की अध्यक्षता में गठित जीवविज्ञान नामिका (Panel) द्वारा भारतीय शैक्षणिक एवं अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए रचित उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिए जीवविज्ञान की पुस्तक का हिन्दी रूपान्तरण। वस्तुतः यह एक बड़ी बात इसलिए भी थी कि रमेश जी के प्रयास का पुनरीक्षण मुझे एवं स्व. डॉ. वी. पी. सिंह को करना था। इस प्रकार अब से लगभग 30 वर्ष पूर्व उच्चतर माध्यमिक स्तर पर आधिकारिक रूपमें एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली ने हिन्दी के माध्यम से विज्ञान के पठन-पाठन की परिकल्पना को साकार करने का सफल प्रयास प्रारम्भ किया था, प्रसन्नता है कि यह प्रयास आज भी जारी है और इसकी एक सुखद परिणति यह रही है कि हिन्दी माध्यम से देश की सर्वोच्च परीक्षा 'भारतीय प्रशासनिक सेवा' (IAS) के लिए तैयारी करने वाले छात्रों की संख्या बढ़ी और उनके मानस में अनायास फैली हिचक/झिझक शनैः-शनैः स्वतः ही निकल गयी।

फिर उनकी रेडियो-दूरदर्शन वार्ताओं ने विज्ञान को पाठकों तक पहुँचाकर नये आयाम स्थापित किये और रमेश जी की ख्याति बढ़ी एवं दरिद्रता घटी। अनेक पारिवारिक विपत्तियाँ आईं और हम एक दूसरे के दुख बाँटते रहे। वे कुछ काल के लिए टूटे और स्वभाव-जन्य मानस दौर्बल्य के शिकार बने परन्तु अंततः हमारी अंतरंगता काम आयी और वे अंततः अपने जीवन को समेट कर नये सिरे से संघर्ष के लिए उद्यत हो गये। वे क्षण अत्यन्त मार्मिक थे और सामंजस्य जुटाने की, समर्पण की भरपूर आवश्यकता थी। मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ कि गीता भाभी ने इस उत्तरदायित्व को चुनौती के रूप में स्वीकारा और परिवार विघटन से बच गया। मैं उन दिनों को याद कर आज भी सिहरन अनुभव करता हूं।

इस संघर्षपूर्ण यात्रा काल में रमेश जी की ख्याति उत्तरोत्तर बढ़ी और गोविन्द वल्लभ पंत कृषि एवं तकनीकी विश्वविद्यालय, पंतनगर के कुलपति के आह्वान पर उन्होंने वहाँ जाकर प्रकाशन विभाग के सह-निदेशक का कार्य लगभग 2 वर्ष तक सँभाला और वहाँ के विद्वान अध्यापक समुदाय से हिन्दी की अनगिनत पुस्तकों का लेखन कराया। तत्पश्चात भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली में पद ग्रहण किया और वहीं से लगभग 28 वर्ष की सेवा-अवधि के उपरांत उन्होंने अवकाश ग्रहण किया।

शेष पृष्ठ 32 पर

डॉ० रमेश दत्त शर्मा : विज्ञान के मर्मज्ञ साहित्यकार

हिमांशु जोशी

रमेश और मैं लगभग एक ही समय दिल्ली आये थे। रमेश उत्तर प्रदेश के एक छोटे-से कस्बे से और मैं उत्तरांचल के एक गाँव से। वह मेरी कहानियों का और मैं 'धर्मयुग' में प्रकाशित हो रही उसकी वैज्ञानिक रचनाओं का प्रशंसक था। मित्रता तो होनी ही थी। संभवतः हमारी पहली भेंट जैनेन्द्र कुमार जी के यहाँ हुई। रमेश ने मुझे बताया था कि दिल्ली में प्रवेश के लिए वह जैनेन्द्र जी और बच्चन जी के कृतज्ञ हैं, क्योंकि बॉटनी में एम.एससी. किये उसे कुछ ही महीने हुए थे, फिर भी इन दोनों ने उसकी साहित्यक अभिरुचियों की कद्र करते हुए, यू.पी.एस.सी. में सम्पन्न हुए इंटरव्यू में रमेश को चुना। जैनेन्द्र जी से रमेश ने उन दिनों 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में धारावाहिक रूप से छप रहे उनके उपन्यास 'सुनीता' की चर्चा की और बच्चन जी से 'मधुशाला' की। दोनों मूर्धन्य साहित्यकार यह देखकर गद्‌गद हो गये कि विज्ञान का यह विद्यार्थी साहित्य में इस गहराई तक पैठा हुआ है। उस समय रमेश की उम्र केवल 20 वर्ष थी।

जैनेन्द्र जी और काका कालेलकर दोनों गाँधीवादी साहित्यकार अभिन्न मित्र थे। काका जी अपने दिल्ली स्थित आश्रम 'सन्निधि' में गोष्ठियाँ आयोजित करते थे। इनके आयोजन का दायित्व मुझे मिला था। रमेश इन गोष्ठियों में प्रायः आया करता। इस तरह हमारी मित्रता बढ़ती रही। दोनों परिवारों में भी अच्छा मेलजोल हो गया। मैं 'कादम्बिनी' के संपादकीय का सदस्य बना तो रमेश से कुछ लेख लिखवाये। 'ब्रिटेन का अंतिम कीमियागर' नामक रमेश की रचना मुझे आज भी याद है। इसमें उसने ब्रिटेन के एक ऐसे रसायनवेत्ता की चर्चा की थी, जिसने यह दावा किया कि वह पारे से सोना बना सकता है। लेकिन जब ब्रिटेन की रॉयल सोसायटी के सामने उसे यह साबित करके दिखाने के लिए बुलाया गया, तो वह प्रयोग का सामान लाने के बहाने नेपथ्य में गया और वहाँ उसने जहर खा लिया। मंच पर लड़खड़ाता हुआ आया और वहीं ढेर हो गया।

विज्ञान के इतिहास से ऐसे रोचक और रोमांचक प्रसंगों से अपने वैज्ञानिक लेखों को सरस बनाने की कला में रमेश शुरू से ही सिद्धहस्त हैं। तभी तो रमेश की वैज्ञानिक रचनाएँ उन दिनों हिन्दी की सभी शीर्षस्थ पत्र-पत्रिकाओं में छपती थीं और साहित्यकारों के बीच भी उनकी चर्चा होती थी। लिखने के लिए तो रमेश ने कविताएँ और व्यंग्य भी खूब लिखे हैं। लेकिन बच्चन जी का आदेश मानकर उसने विज्ञान-लेखन पर ही अधिक ध्यान दिया।

रमेश की पहली रचना एक वैज्ञानिक व्यंग्य कविता थी- 'गागरिन के नाम'। यह 'कविता' जून 1961 में प्रकाशित हुई थी। कादम्बिनी में अगस्त 1962 में 'अंतिम कीमियागर' वाली रचना प्रकाशित हुई थी। कादम्बिनी में ही सन् 1962 में उसकी एक और रचना छपी- 'वनस्पतियों से यह अस्तित्व'। इसमें पौधों के एक ऐसे वर्ग का परिचय दिया गया था जो फफूँदी और काई के मेल से बना है - लाइकेन। इसके लिए उसने हिन्दी का नाम भी गढ़ा था - शैवाक यानी शैवाल+कवक। सन् 1964 में रमेश की एक और रचना कादम्बिनी में प्रकाशित हुई - 'सौ साल के जवान'। इसमें रूस के एक ऐसे प्रदेश की चर्चा थी जहाँ दुनिया में सबसे अधिक शतजीवी पाये गये।

'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में भी रमेश का प्रवेश एक कविता से हुआ था - 'आदमी का पिता।' यह एक बालक के बारे में थी जो सड़क के किनारे साइकिलों के पंचर जोड़कर और हवा भरके अपने परिवार का पेट पाल रहा था। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में उसकी पहली वैज्ञानिक रचना थी 'अफवाहों के शिकार ये वैज्ञानिक'। फरवरी,

1963 में प्रकाशित इस रचना में रमेश ने उन वैज्ञानिकों की लोमहर्षक कहानियाँ दी थीं, जिन्हें जनता में उनके बारे में फैली अफवाहों के कारण विपत्तियों का सामना करना पड़ा था।

जब मैं 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में कार्यरत था, तब तक रमेश हिन्दी का जाना-माना विज्ञान लेखक बन चुका था। हिन्दी में विज्ञान-लेखन के माध्यम से ही भारत के शीर्षस्थ वैज्ञानिकों से रमेश का परिचय हो गया और उनकी वैज्ञानिक रचनाओं से भी रमेश ने हिन्दी के विज्ञान-साहित्य की श्रीवृद्धि की। उन दिनों वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर पंचानन महेश्वरी इस क्षेत्र के सबसे प्रतिष्ठित वैज्ञानिक थे। क्योंकि रमेश का विषय भी वनस्पतिविज्ञान ही रहा है,अतः प्रो. महेश्वरी के एक लेख का उसने हिन्दी में अनुवाद किया जिसमें भारत में वनस्पति विज्ञान की प्रगति का इतिहास था। यह लेख चार खण्डों में कलकत्ता से प्रकाशित 'सचित्र आयुर्वेद' में छपा और बस उसके बाद से ही रमेश दिल्ली विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान विभाग के वैज्ञानिक परिवार में शामिल हो गया। वहाँ के वैज्ञानिकों से किये गये रमेश के साक्षात्कार रंगीन चित्रों के साथ 'धर्मयुग' में लगातार छपे और बहुत लोकप्रिय हुए। इन रचनाओं से आम पाठकों को पहली बार यह पता चला कि वनस्पति विज्ञान की एक शाखा पराग विज्ञान भी होती है। इकोलोजी, भ्रूणविज्ञान, मॉस आदि का परिचय बड़े ही रोचक ढंग से दिया गया। मध्यवर्ती पृष्ठों पर सूक्ष्मदर्शी के कैमरे से खींचे गये पौधों की विविध-रंगी और बहुरूपी कोशिकाओं के चित्रों ने यह सिद्ध कर दिया कि प्रकृति से बड़ा कलाकार कोई और नहीं है। बहुत समय तक 'धर्मयुग' में रमेश का साप्ताहिक वैज्ञानिक स्तंभ छपता रहा। इसमें छोटी-छोटी जानकारियाँ होती थीं, लेकिन सबकी सब रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़ी और मजेदार। कुछ शीर्षक मुझे आज भी याद हैं -सबसे छोटी बैटरी : जिंदा बैटरी', 'अब दिल नही टूटा करेंगे', 'बिस्कुट बनाने वाला कम्प्यूटर', 'छुई-मुई की लज्जा का रहस्य', 'दर्दे दिल से बचने के लिए कम खाइये' इत्यादि।

मासिक पत्रिकाओं में 'नवनीत' में उसकी एक से बढ़कर एक रचनायें छपीं और कुछ लोग तो यह अफवाह फैलाने लगे कि नवनीत के संपादक नारायण दत्त और रमेश दत्त दोनों रिश्तेदार हैं। स्व. रमेश बक्षी ने 'ज्ञानोदय' में भी रमेश की कुछ यादगार रचनाएँ छापीं। इनमें एक विज्ञान-कथा 'प्रयोगशालीय प्राण' विषेश रूप से उल्लेखनीय है। इसमें प्रयोगशाला में पैदा किये गये एक मानव की प्रणय-गाथा है।

'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में जब किसी एक विषय के विविध पक्षों पर धारावाहिक के रूप में रचनाओं का प्रकाशन करने की परम्परा भी मनोहर श्याम जोशी के संपादन काल में शुरू हुई तो जीव-विज्ञान तथा चिकित्सा-विज्ञान के विविध पहलुओं पर रमेश के लेख बहुत प्रशंसित हुए। इन लेख -श्रृंखलाओं में 'विरासत में मिली बीमारियाँ', 'जीवविज्ञान का टाइम बम','जुकाम-शास्त्र', 'आधुनिक विज्ञान चिर यौवन की खोज में', 'हमारे वैज्ञानिक','वो गुत्थी आज भी सुलझा रहा हूँ' विशेष उल्लेखनीय हैं। 'वो गुत्थी आज भी सुलझा रहा हूँ' में शरीरक्रियाविज्ञान के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के अवसर पर ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज के फिजिओलाजी विभाग के डॉ.रमेश बिजलानी के साथ तेरह किश्तों में मानव शरीर की आंतरिक क्रियाओं पर किये गये अनुसंधानों का बड़ा रोचक परिचय दिया गया था। इसमें यादें, भूख,प्यास, नींद, दर्द, नर-मादा, गर्मी-सर्दी से लेकर ध्यान और योग का शरीर पर प्रभाव तथा मस्तिष्क और मानव व्यवहार पर किये गये चौंकाने वाले प्रयोगों का विवरण दिया गया था। 'हमारे वैज्ञानिक' श्रृंखला बच्चों के स्तंभ में छपी,जिसमें उस समय विद्यमान लगभग सभी शीर्षस्थ वैज्ञानिकों के जीवन और कार्य का परिचय बाल-सुलभ शैली में दिया गया था।

इनमें से केवल 'हमारे वैज्ञानिक' रमेश ने पुस्तक रूप में प्रकाशित कराई। पराग प्रकाशन के संचालक श्री श्रीकृष्ण को मैंने ही सुझाव दिया था कि वह रमेश से ये सभी लेख लेकर पुस्तक रूप में छापे । मेरे कहने पर

रमेश ने इस श्रृंखला में डॉ. श्रीकृष्ण जोशी के बारे में भी एक लेख लिखा था। उन दिनों वे रुड़की में थे और उनकी प्रतिभा से कोई परिचित नहीं था। बाद में सी.एस.आई.आर. के महानिदेशक बने और वे सुपर कंडक्टिविटी के क्षेत्र में मौलिक अनुसंधानों के लिए विश्वविख्यात हैं।

इन लेख-शृंखलाओं में से हरेक पर रमेश की किताबें छप सकती थीं। लेकिन रमेश दुनियादारी में इतना कच्चा है कि उसने किताबें छपाने की ओर ध्यान ही नहीं दिया। पिछली 40 वर्षों में अब तक कोई उसकी एक हजार के करीब रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इनसे 8-10 अच्छी किताबें बन सकती हैं। सुना है अब उसने इधर प्रयास करना शुरू किया है और विषयवार फाइलें बना ली हैं।

जब रमेश 'धान-कथा' लिखने के लिए'इण्टरनेशनल राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट' फिलिपीन्स में मनीला गया, तो मैंने उसे बताया कि ह्वेन सांग के शिष्य ने अपने यात्रा-वृत्त में नालंदा में पकते चावलों की दूर-दूर तक फैली खुशबू का जिक्र किया है। इसी तरह उसने प्रो. विद्यानिवास मिश्रजी से धान के बारे में पूर्वी उत्तर प्रदेश में प्रचलित सांस्कृतिक रीति-रिवाजों की जानकारी ली। उसकी यह किताब नेशनल बुक ट्रस्ट से छपी है बच्चों के लिए - सभी भाषाओं में। बड़ों के लिए भी उसने अंग्रेजी और हिन्दी में धान की कहानी लिखी है। यह 'कॉफी टेबल बुक' के रूप में छपाने की उसकी योजना है।

आजकल भी वह 'पूर्वी भारत में बारानी धान' शीर्षक से एक किताब उसी अंतर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान के भारत स्थित कार्यालय के लिए लिख रहा है। 'कृषि दर्शन' के माध्यम से रमेश ने किसानों तक नई जानकारी पहुँचाने का जो अभियान चलाया, उसने उसको भारत के किसानों में लोकप्रिय बना दिया। रमेश के 'कृषि समाचारों' में इतनी जानकारी रहा करती थी कि श्रोतागण कलम-कागज लेकर बैठा करते थे । मैं तो अक्सर मजाक उड़ाया करता था कि अब यह घास छीलना छोड़ो - कुछ बड़ा काम करो । लेकिन रमेश के लिए कोई काम छोटा नहीं है। वह हर काम को उसी तन्मयता और तल्लीनता से करता रहा है - बिना यह सोचे कि इससे उसे क्या मिलेगा?

हिन्दी में विज्ञान बहुतों ने लिखा है। लेकिन नये-नये विज्ञान लेखक तैयार करने का काम और हिन्दी के विज्ञान लेखन की समीक्षा करते रहना- यह कार्य विज्ञान परिषद के डॉ. सत्यप्रकाश और डॉ. शिवगोपाल मिश्र के बाद रमेश ने ही किया है। हिन्दी के अनेक स्वनामधन्य विज्ञान लेखक रमेश से प्रेरणा लेकर ही इस क्षेत्र में आये। इनमें सर्वश्री तुरशन पाल पाठक,प्रमोद जोशी, देवेन्द्र मेवाड़ी, कुलदीप शर्मा, डॉ. जगदीप सक्सेना, डॉ. विजय कुमार श्रीवास्तव विशेष उल्लेखनीय हैं।

'धर्मयुग' में प्रकाशित रमेश की रचना 'हिन्दी के ये वैज्ञानिक साहित्यकार' पहली रचना थी, जिसने पूरे हिन्दी जगत का ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि हिन्दी में जो लोग विज्ञान-साहित्य की अभिवृद्धि कर रहे हैं, उनके योगदान को मान्यता मिलनी चाहिए।

दिल्ली में पिछले 44 वर्षों से रहने के बाद भी रमेश को दिल्ली की हवा नहीं लगी । न वह गुटबाजी में पड़ा और न इनाम-इकराम के लिए कुलाबे भिड़ाने में। हर रोज आधी रात को उठ जाना और तपस्या की तरह विज्ञान की सेवा करना रमेश की आदत में शुमार हो गया है। हिन्दी में विज्ञान-साहित्य की इतनी कमी है कि हमें ऐसे सैकड़ों रमेश चाहिए।

7 सी-2 हिन्दुस्तान टाइम्स अपार्टमेंट,
मयूर विहार,
दिल्ली-110091

जिन्होंने विज्ञान और साहित्य के बीच पुल बनाया

डॉ॰ कन्हैया लाल नन्दन

मैं जब कलकत्ता में 'ज्ञानोदय' के संपादकीय विभाग में था, तब से डॉ॰ रमेश दत्त शर्मा की वैज्ञानिक रचनाएँ पढ़ता हूँ। ज्ञानोदय के अनेक विशेषांकों में रमेश की वैज्ञानिक रचनाएँ प्रकाशित की गयीं। इनमें एक 'विज्ञान-कथा' भी थी, जिसकी कहानी मुझे आज भी याद है। अमरीका और रूस ने मिलकर अंतरिक्ष-अभियान चलाये, उससे वर्षों पहले दोनों के बीच शीत युद्ध के दिनों में रमेश ने इस विज्ञान-कथा में यह कल्पना की थी कि एक सह -अभियान में रूसी अंतरिक्ष -यात्री और अमरीकी महिला अंतरिक्ष-यात्री के बीच प्रेम हो जाता है। जब वह युवती अंतरिक्ष यात्रा समाप्त कर वापस अपने देश उड़ जाती है तो उसका रूसी प्रेमी जार-जार रोता है। उसकी अंतरिक्ष-पोशाक में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी कि आँसुओं का निकास किया जा सके। लिहाजा स्पेस-सूट के अंदर के वातावरण का संतुलन बिगड़ जाता है और उसकी मौत हो जाती है। यह एक अनूठी कल्पना थी।

'धर्मयुग' में रमेश की रचनाएँ नियमित रूप से छप रहीं थीं। मैं 'धर्मयुग' के संपादकीय विभाग में पहुँचा, तो मैंने देखा जब भी विज्ञान के किसी विषय पर भारती जी को रचना की जरूरत महसूस होती, तो वे हमेशा रमेश दत्त शर्मा को ही याद करते। प्रायः वे स्वयं ही तार या चिट्ठी भेजकर रमेश से रचनाएँ मँगवाते। इसका सबसे बड़ा कारण था रमेश की अनूठी शैली, जिसमें वैज्ञानिक रचना के बीच वे बड़े करीने से साहित्यिक उद्धरण पिरो देते थे। अक्सर तो कविताएँ ही उद्धृत की जाती थीं। लेकिन कहानियाँ और अन्य विधाओं का भी रमेश की वैज्ञानिक रचनाओं में बड़ा सटीक पुट रहता था।

'अब गेहूँ भी रंग बदलेगा' शीर्षक से रमेश की एक रचना 'धर्मयुग' के 19 दिसम्बर 1965 के अंक में प्रकाशित हुई थी। इसको शुरू करते हुए श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरिक्सा की एक कहानी उद्धृत की गयी थी, जिसमें रिक्शेवाली की पत्नी राशन में मिले 'भुँजे से लाल रंग वाले गेहूँ' के लिए उसे झिड़कती है, कि उससे नहीं खायी जाती इस लाल गेहूँ की रोटी। फिर किस तरह मेक्सिको की लाल गेहूँ वाली किस्म 'सोनोरा-64' के बीजों में गामा-विकिरण की खुराक देकर उत्परिवर्तन पैदा किये गये, और डॉ॰ एम.एस. स्वामीनाथन के इस प्रयोग से बीजों का रंग बदलकर 'शर्बती' हो गया। यह जानकारी भी उनके युवा साथी डॉ॰ वर्गीज से गेहूँ के प्रयोग खेत में जाकर की गयी बातचीत से दी गयी है। किस तरह वह युवा वैज्ञानिक हर कतार में जाकर गेहूँ की बाली को हथेली से रगड़-रगड़कर दाने निकाल कर देखता है और इस प्रक्रिया में उसकी हथेलियाँ लाल हो गयी हैं ऊपर से तेज धूप पड़ रही है। इस तरह का भारत में चल रहे वैज्ञानिक प्रयोगों का आँखों देखा हाल आपको रमेश की ही वैज्ञानिक रचना में मिलेगा। बाद की पीढ़ी में भी वे ही चमके जिन्होंने रमेश की ललित-विज्ञान लेखन की एक अनूठी शैली को अपनाया जो पाठक से तादात्म्य स्थापित करके उसे आसपास खिले गुलाबों से बहलाती-फुसलाती वैज्ञानिक जटिलताओं के बियाबान में इस तरह ले जाती है कि उसे पता ही नहीं चलता कि उसे साहित्य ही नहीं, विज्ञान परोसा जा रहा है।

एक बार प्रगति मैदान में आयोजित एक कवि-गोष्ठी में रमेश ने अपनी एक कविता पढ़ी जिसमें मानव देह के अंगों का ब्यौरा देते हुए बताया गया था कि जीवन का नियंत्रण किस तरह 'पेट' करने लगा है, 'दिमाग' नहीं। पेट जो भरता ही नहीं है। नामवर सिंह जी उस कवि-गोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे थे और उन्होंने बाद में रमेश से कहा था कि वह कविता लिखना बंद न करें। लेकिन कविवर बच्चन जी के कहने पर रमेश ने कविता की बजाय

विज्ञान-लेखन पर ही ध्यान दिया।

मैं जब दिल्ली आया तो 'दिनमान' में रमेश का नियमित विज्ञान-स्तंभ होता था और कई बार आवरण-कथाएँ भी लिखीं। सन् 1984 में गणतंत्र दिवस पर जब 'सन् 2001 का भारत' विषय पर 'दिनमान' का विशेषांक छपा तो इसमें आवरण-कथा रमेश ने ही लिखी थी- 'कहीं हिमालय की हजामत न हो जाये'।

अब हम सन् 2001 से गुजर चुके हैं और देख चुके हैं कि रमेश का विश्लेषण कितना सही निकला। हमारे गोदाम अनाज से अटे पड़े थे और हम गेहूँ -चावल विदेशों को निर्यात कर रहे थे तथा अफगानिस्तान जैसे जरूरतमंद देशों को अन्न का दान भी कर रहे थे। रमेश ने बढ़ती आबादी के आँकड़े देखकर भूख, कुपोषण, स्वास्थ्य और पर्यावरण और विकास के मुद्दे इस लेख में बड़ी तर्कयुक्त शैली में उठाये थे।

उसी वर्ष सन् 1984 में मेक्सिको में विश्व जनसंख्या सम्मेलन हुआ था और रमेश ने 'आबादी के बोझ से पिचकती दुनिया का भविष्य' उपशीर्षक और 'दूधों नहाओ और पूतों नहाओ की डरावनी असलियत' के मुख्य शीर्षक में अनेक अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञों को उद्धृत करते हुए बड़ी पठनीय और संग्रहणीय सामग्री परोसी थी। इसमें बताया था कि सन् 30 के दशक में तीसरी दुनिया के देश अन्न का निर्यात करते थे और 1960 आते-आते कल के अन्नदाता आज के भिखारी बन गये ! इस लेख में एक बॉक्स था 'अफ्रीका तेरा क्या होगा' जिसमें बताया गया था कि अगर यही हाल रहा तो सन् 2000 में लगभग 20 करोड़ अफ्रीकी अपना पेट भरने के लिए मुँह खोले दूसरे की ओर ताकेंगे। कितना सच लिखा था रमेश ने।

सन् 1983 के जुलाई के अंक में हमने औरतों पर हो रहे जुल्मों पर 'दिनमान' का अंक केन्द्रित किया तो रमेश के लेख ने सबका ध्यान खींचा जिसका शीर्षक था - 'क्या सर्जरी से बलात्कारी की अकल ठिकाने लगाई जा सकती है?, यह बहुत शोधपरक रचना थी जिसमें उग्र, क्रोधी और कामी व्यक्तियों को 'शांत' करने के प्रयोगों की चर्चा की गयी थी।

भविष्य में यह दुनिया कैसी होगी, उस समय पर रमेश ने खूब लिखा है और वे सारी बातें किस तरह सच हो रही हैं, यह देखकर आप दंग रह जाते हैं। मसलन सन् 1983 में ही अक्टूबर में 'दिनमान' में रमेश की एक रचना प्रकाशित हुई थी,'जब दुनिया में रोबोटों का राज होगा'।अब हम उस युग में आ गये हैं, जब फैक्टरियों में ही नहीं,सुपरबाजारों,प्रयोगशालाओं और चिकित्साकक्षों से आगे बढ़कर युद्ध क्षेत्र में भी रोबोट कमाल दिखा रहे हैं।

इस भविष्य-वाचन का एक उदाहरण सन् 1984 के नववर्ष विशेषांक में मिला। इसमें अंतर्राष्ट्रीय आनुवंशिकी महासम्मेलन के बारे में रमेश जी की एक रपट प्रकाशित हुई थी, जिसका शीर्षक था -'संतान पैदा करने के लिए अब मर्द की जरूरत नहीं रहेगी।' आज 'क्लोनिंग' की खोज ने इस भविष्यवाणी की वास्तविकता पर मुहर लगा दी। इसमें प्रो.एम. एस. मोहनराम, प्रो. पुष्प मित्र भार्गव, डॉ. सुशील कुमार इत्यादि सभी नामी-गरामी आनुवंशिकी-विदों से भेंटवार्ता के आधार पर प्रामाणिक किन्तु रोचक जानकारी प्रस्तुत की गयी थीं।

सन् 1985 में मार्च के 'दिनमान' में भोपाल त्रासदी पर 'झूठ कौन बोल रहा है' शीर्षक से रमेश की खोजपरक रचना ने तहलका मचा दिया था। अमरीकी दादागिरी से पूरा विश्व आक्रान्त है। रमेश ने सन् 1983 में 16-22 जनवरी के अंक में लिखा था 'अंतरिक्ष में यह दादागिरी कब तक चलेगी' इसमें अंतरिक्ष में अमरीका की बढ़ती सैन्य गतिविधियों का ब्यौरा देकर उस पर चिंता व्यक्त की गयी थी।

अभी 'आविष्कार' के मई 2003 के अंक में रमेश की 'सार्स' पर आवरण कथा छपी है। इस तरह के रहस्यमय रोगों और घटनाओं के बेबाक वैज्ञानिक विश्लेषण में रमेश का जबाब नहीं है। सन् 1985 में जनवरी में रमेश की एक रचना ऐसी ही एक बीमारी पर छपी थी- 'आ रहा है पेचिश का चार चाबुक वाला बैक्टिीरिया, जिसका इलाज फिलहाल नहीं है' और अक्टूबर 1990 के साप्ताहिक 'सण्डेमेल' में 'खेतों में बने 'भुतहा घेरों का राज' खोला गया। ब्रिटेन के कुछ किसानों के खेतों में मिले इन घेरों की अब भी चर्चा होती रहती है। नवम्बर 1990 में हमने साप्ताहिक संडेमेल का 'विज्ञान विशेषांक'

आयोजित किया था। इसके संयोजक पंकज प्रसून से मिलकर रमेश ने इसे संग्रहणीय विशेषांक बना दिया। इसमें प्रकाशित डा. लालजी सिंह द्वारा डी एन ए छाप से असली माँ-बाप की पहचान के तमाम मामलों पर रमेश का सचित्र लेख पाठकों को बहुत पंसद आया।

'नवभारत टाइम्स' के रविवारीय परिशिष्ट में रमेश ने मनीला से 'एड्स' पर लेख भेजा था, जो इस असाध्य घातक रोग पर हिन्दी में प्रकाशित पहला प्रामाणिक लेख था। रमेश की लेखनी निरन्तर सक्रिय है। 'डॉली' की कहानी हो या 'मानव-क्लोनिंग' की, 'मानव-जीनोम' की खोज हो या 'धान-जीनोम' की-सभी नये-नये विषयों पर रमेश दत्त शर्मा निरंतर लिख रहे हैं। मुझे आश्चर्य है कि उनके विज्ञान-लेखन की शैलीगत विविधता पर किसी ने अनुसंधान क्यों नहीं किया ? यह सूचना भी सुखद है कि अब 40 वर्षों में प्रकाशित अपनी कोई एक हजार के करीब रचनाओं को विषयवार छाँटकर रमेश किताबें छपा रहे हैं। यह उसे बहुत पहले कर लेना चाहिए था। लेकिन इस आदमी में व्यावसायिक बुद्धि है ही कहाँ। मैं प्रो. शिव गोपाल मिश्र को साधुवाद देता हूँ कि इस सरल स्वभाव के विज्ञान-साहित्यकार के जीवन और कार्य पर उन्होंने 'विज्ञान' जैसी हिन्दी की सबसे पुरानी शीर्षस्थ वैज्ञानिक पत्रिका का विशेषांक निकालने की बात सोची।

132, कैलाश हिल्स
नई दिल्ली -110065

पृष्ठ 26 का शेष .....

मुझे उनके कार्यालय में जाने के असंख्य अवसर मिलते रहे, विशेषकर तक से जब 1978 में दिल्ली विश्वविद्यालय से त्याग-पत्र देकर मैं हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर, पौड़ी गढ़वाल में वनस्पति-विज्ञान के आचार्य एवं विभागाध्यक्ष के पद पर नियुक्त हुआ। उन्होंने अपनी जिज्ञासा कभी नहीं छोड़ी और न ही भाई-चारा, जो उनके विभाग में दोपहर के भोजनावकाश में देखने ही बनता था जब हम अतिथि और उनके सहकर्मी साथ-साथ भोजन करते और विविध वैज्ञानिक विषयों पर चर्चा भी। इतनी दूर कार्यरत होते हुए भी हमारा पारिवारिक सामीप्य अक्षुण्ण ही नहीं बना रहा, उसमें प्रगाढ़ता भी आई, जो उनकी द्वितीय बेटी के सुपरिचित पर्यावरणविद्, सुन्दरलाल जी बहुगुणा के वरिष्ठ पुत्र से, ऋषिकेश आश्रम में विवाह सम्पन्न होने पर विशेषतः परिलक्षित हुई।

मुझे प्रसन्नता है कि ऐसे ही एक सुखद क्षण मैं मैंने उन्हें "प्राचीन भारत में वनस्पति विज्ञान' विषय पर अपने ही निदेशन में हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय से पी.एचडी. का कार्य पूर्ण करने का सुझाव दे डाला। यह एक अत्यन्त भावुकतपूर्ण क्षण था क्योंकि हम दोनों सहपाठी होने के साथ-साथ ऐसे अंतरग मित्र भी थे, जो गत 35 वर्षो से एक दूसरे के गुण-अवगुणों और सीमाओं से भली-भाँति परिचित थे। लेकिन यह नया गुरू-शिष्य का सम्बन्ध अत्यधिक दुरूह था क्योंकि इसमें कई प्रकार की ऊँच-नीच और साफगोई सन्निहित होती है। लेकिन हम दोनों आज भी प्रसन्न हैं कि समस्त कार्य इतनी तन्मयता, प्रेम और सौजन्य के परिवेश में सम्पन्न हो गया कि उनके सहपाठी परिणाम आने पर आश्चर्य से कहने लगे "भाई शर्मा जी, हमें पता ही नहीं चला कि आपने पंजीकरण और वह भी प्रो. पालीवाल के निर्देशन में कब कराया" और अब वे डॉ. रमेश दत्त शर्मा के नाम से सुविख्यात हैं।

आज हम दोनों अवकाशप्राप्त हैं और अपने-अपने चयनित मार्गों से विज्ञान और विशेषतः वनस्पति विज्ञान की सेवा में संलग्न भी। लेकिन हमारी मित्रता आज भी उतनी ही प्रगाढ़ता लिए है जितनी एम.एससी. में पढ़ाई के दिनों में थी, क्योंकि हमने इसके ऊपर किसी अन्य प्रकार का आलेप नहीं होने दिया।

रहिमन यों सुख होत है, बढ़त देख निज गोत।
ज्यों बड़ियारे नयन लखि नयनन को सुख होत।

यूजीसी के ख्यातिप्राप्त प्राध्यापक
वनस्पति विज्ञान विभाग
स्वामी श्रद्धानन्द कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय अलीपुर,
नई दिल्ली-110036

दूरदर्शन के कृषि और विज्ञान कार्यक्रमों के प्रतिभाशाली प्रसारक

शरद दत्त

यह सन् साठादिक की बात है। उन दिनों दिल्ली से दूरदर्शन कार्यक्रमों में मनोरंजन की प्रधानता नहीं थी। असल में दूरदर्शन की शुरुआत मूलरूप से स्कूली शिक्षा और किसानों की खेती-बाड़ी की नई तकनीकों की जानकारी देने के लिए ही की गयी थी। स्कूलों के लिए सभी विषयों पर विशेष कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता था। रमेश ने अपना पहला कार्यक्रम स्कूलों के लिए प्रसारण में नवीं-दसवीं कक्षा के लिए पौधों के बारे में किया था। यह सजीव (लाइव) प्रसारण था। दूरदर्शन पर पहला ही प्रोग्राम 'लाइव' करना बड़ा हीं कठिन होता है। जो लोग स्टूडियो से बाहर ऊँची और बड़ी-बड़ी हाँकते हैं, जब स्टूडियो में कैमरे का सामना करते हैं तो उनके पसीने छूट जाते हैं ,चेहरे पर हवाइयाँ उड़ जाती हैं गला रुँध जाता है और घिग्घी बँध जाती है। रिहर्सल के समय रटाये गये वाक्य भी भूल जाते हैं। लेकिन रमेश ने अपना पहला लाइव प्रोग्राम भी पूरी सहजता और भरोसे से किया जो बाद में उनकी पहचान बन गया था।

लेकिन स्कूलों के कार्यक्रमों में अधिकतर अध्यापक ही बुलाये जाते थे और यहाँ भी एक अपवाद थे रमेश क्योंकि उन दिनों वह भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में संपादक के पद पर कार्यरत थे। इसलिए दूरदर्शन पर उसके लिए कृषि दर्शन ही उपयुक्त 'स्लॉट' था। पहला कृषि कार्यक्रम रमेश ने 'साइट' (Site सैटेलाइट इन्स्ट्रक्शनल टीवी एक्सपेरीमेण्ट) के अंतर्गत किया। इसमें फफूँद से होने वाली बीमारियों की रोकथाम कैसे की जाये, इसको बताने के लिए फफूँदनाशी दवा से बीज का उपचार करना बताया गया था जिसके लिए रमेश को दवा, बीज और घड़ा लेकर स्टूडियो के बाहर एक पेड़ के नीचे शूटिंग करनी पड़ी थी।

'कृषि दर्शन' में रमेश ने चौधरी रघुनाथ सिंह के साथ शुरुआत की। चौधरी रघुनाथ सिंह अब रिटायर हो गये हैं लेकिन उन्हें आज भी 'कृषि दर्शन' को बुलंदियों पर ले जाने के लिए याद किया जाता है। वे 'कृषि दर्शन'को स्टूडियो से बाहर गाँव और खेतों में ले गये। रमेश दत्त शर्मा हमेशा उनके सबसे चहेते प्रस्तुतकर्ता और स्क्रिप्ट राइटर थे। बाद में 'कृषि दर्शन' के लगभग सभी प्रोड्यूसर रमेश को अपने कार्यक्रम में लेना पसंद करने लगे। एक तो रमेश पूरी तैयारी करके आते थे और खेतीबाड़ी जैसे शुष्क कार्यक्रम में भी फसलों के इतिहास को जोड़कर या कुछ चौंकाने वाली बातें बताकर अपना प्रस्तुतीकरण बड़ा रोचक बना देते थे।

रमेश के आने से पहले 'कृषि दर्शन' में केवल 'पूसा इन्स्टीट्यूट' के वैज्ञानिक ही आते थे। रमेश के सुझाव पर पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों को भी बुलाया जाने लगा और इस तरह 'कृषि दर्शन' के फलक का काफी विस्तार हुआ ।

रमेश ने कृषि समाचारों में तो मानो जान ही डाल दी। उसने स्वयं जगह-जगह से चित्र इकट्ठे किये और समाचार भी देश की सभी अनुसंधानशालाओं, कृषि

विश्वविद्यालयों और अंतर्राष्ट्रीय कृषि संस्थानों से मँगाकर भी दिये जाने लगे। रमेश के माध्यम से ही एफ. ए. ओ. (फूड एण्ड एग्रीकल्चुरल ऑर्गेनाइजेशन) के नई दिल्ली स्थित कार्यालय ने 'कृषि दर्शन' के लिए अपनी फिल्में भेजना शुरू किया। 'विश्व खाद्य दिवस' पर कृषि संबंधी मीडिया के लिए एफ. ए. ओ. पुरस्कार दिया करता था। इसमें रमेश को रेडियो तथा टी वी के लिए लिखी गयी पटकथाओं के लिए पुरस्कृत किया गया था और 'कृषि दर्शन' के चौधरी रघुनाथ सिंह और हंसराज नायक सहित लगभग सभी प्रोड्यूसर पुरस्कृत हो चुके थे।

मुझे याद है कि श्रीमती इंदिरा गांधी की पहली पुण्य तिथि पर रमेश ने 'कृषि दर्शन' की कम्पेयरिंग की। वह इतना अच्छा बोला कि लिफ्ट में उसे हमारे तत्कालीन महानिदेशक मिले तो उन्होंने इतने अच्छे प्रस्तुतिकरण के लिए रमेश को बधाई दी। दूसरे दिन एफ.ए. ओ. के सभाकक्ष में लोधी रोड पर कोई कार्यक्रम था तो वहाँ अध्यक्षता के लिए आये हुए तत्कालीन सूचना और प्रसारण मंत्री श्री बसंत साठे ने भी रमेश के इस प्रस्तुतीकरण की भूरि-भूरि प्रशंसा कर डाली। इससे 'कृषि दर्शन' से संबंधित लोगों से वह लोकप्रियता देखी न गयी और उन्होंने रमेश को केवल 'कृषि समाचार' लिखने तक सीमित कर दिया। लेकिन इससे 'कृषि दर्शन' की ही क्षति हुई।

मुझे रमेश के साथ काम करने का आनंद तब आया जब हम दोनों ने मिलकर सुप्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन् के बारे में एक वृत्तचित्र बनाया "द ग्रीन रिवोल्यूशनरी"। इसकी पूरी रूपरेखा रमेश ने बनाई थी। साथ ही चेन्नई, कोयम्बत्तूर और वाइनाड जाकर शूटिंग की। दिल्ली में पूसा, कृषि भवन और योजना भवन में शूटिंग की। रमेश ने इस फिल्म की शूटिंग के लिए पूरा प्रबंध किया और इस काम को पूरा करने में हमें पूरा एक साल लग गया, क्योंकि डॉ. स्वामीनाथन बहुत व्यस्त रहते थे। प्रो. स्वामीनाथन के साथ भी पूरा समन्वय करना रमेश की ही जिम्मेदारी थी।

रमेश के वैज्ञानिक लेख मैं पढ़ता रहा हूँ और उसकी जटिल विषयों को रोचक बनाने की कला का कायल हूँ। रमेश के व्यक्तित्व में एक सहजता है जो मुग्ध करती है।

अब तक रमेश ने 500 से अधिक दूरदर्शन के लिए कार्यक्रम किये होंगे। अनेक प्रोड्यूसरों ने उससे वृत्तचित्रों के लिये पटकथाएँ लिखवाई हैं। वह स्वयं भी कई वृत्तचित्र बना चुका है, लेकिन दुनियादारी में अब भी कच्चा है। उसे मोल भाव नहीं आता। इतना भोला इंसान दिल्ली में न जाने किसने-किसने ठगा होगा। मुझे मालूम है कि अनेक प्रोड्यूसरों ने उससे लिखवाया और उसका भुगतान नहीं किया। लेकिन रमेश को तो काम करने का नशा है। रोज रात को दो-ढाई बजे उठ जाना पढ़ना या लिखना उसकी ऐसी आदत बन गयी है जिस पर उसका भी वश नहीं है। साल भर उसके साथ रहकर देखा कि वह हम सबसे पहले तैयार होकर कोई किताब पढ़ता मिलता था। मुझे रमेश से दोस्ती पर नाज़ है। हिन्दी के विज्ञान साहित्य में रमेश का योगदान सचमुच अविस्मरणीय है।

उपनिदेशक

दूरदर्शन केन्द्र

नई दिल्ली

मेरे गुरु और मार्गदर्शक डॉ. शर्मा

श्री हंसराज नायक

अब से कोई 20 वर्ष पहले जब मैं दूरदर्शन के 'कृषि दर्शन' विभाग में प्रोडक्शन सहायक के पद पर आया था, राजस्थान के ठेठ गाँव से आया किसान ही लगता था। कानों में सोने की बाली पहने हुए था। अंग्रेजी बोलने में अटकता था। मुझे दूरदर्शन के प्रोग्राम बनाने और दिखाने की तकनीक के बारे में कुछ भी पता नहीं था। भारतीय कृषि के बारे में मेरा ज्ञान किसान का बेटा होने के नाते बस फसलें उगाने के लिए खेत की तैयारी, हल चलाने, बीज बोने, रोपाई और कटाई वगैरह खेती-बाड़ी के कामों तक ही सीमित था। भारतीय कृषि के विकास और इतिहास के बारे में मुझे कुछ भी नहीं मालूम था, हालाँकि इतिहास में स्नातकोत्तर उपाधि के कारण भारत का राजनीतिक इतिहास तो ज्ञात था।

डॉ. शर्मा से 'कृषि दर्शन' के इन्हीं प्रारंभिक दिनों में मेरा परिचय हुआ। दूसरे लोग मेरी खिल्ली उड़ाते थे, जब कि डॉ. शर्मा ने मुझे 'खेती', 'फल फूल', 'कृषि चयनिका' आदि पत्रिकाएँ लाकर दीं और दूसरा कृषि-साहित्य पढ़ने को दिया। वे हमेशा मेरी हिम्मत बढ़ाते रहते कि किसान के बेटे हो, तुम बहुत अच्छे कृषि-कार्यक्रम बना सकते हो। उन दिनों वे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में प्रधान सम्पादक थे। जिस दिन वे 'कृषि दर्शन' का कार्यक्रम प्रस्तुत करते उस दिन पहले से पूछ लेते कि आधा घण्टे में क्या-क्या विषय दिखाये जायेंगे। उनके बारे में पूरी तैयारी करके आते। उनका प्रस्तुतीकरण हमेशा ही बड़ा रोचक होता था और कंट्रोल रूम में बैठे हम सब उनसे कोई नयी जानकारी पाते और विस्मित रह जाते। इसी तरह जब वे 'कृषि-समाचार' प्रस्तुत करते, तो हमेशा राष्ट्रीय ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय स्तर की खबरें लाते। उन समाचारों के चित्र भी देते। चित्रों का उनके पास अच्छा भंडार रहता था। उन्होंने मुझे भी कहा कि मैं फसलों के, कृषि यंत्रों के, फूलों के, फलों के,पशुपालन,मछली पालन इत्यादि के चित्र इकट्ठा करता रहूँ। इस तरह कृषि दर्शन में हमने एक अच्छी लाइब्रेरी चित्रों की बना ली। इनमें से अधिकतर चित्र शर्मा जी ने ही जुटाये थे, जिनका दूसरे प्रस्तुतकर्ता भी इस्तेमाल करते थे।

दूरदर्शन का माहौल कुछ अलग तरह का होता है। उसमें मेरे जैसे किसान के बेटे को फिट करने में डॉ. शर्मा ने और मेरे बॉस चौधरी रघुनाथ सिंह ने बहुत बड़ी भूमिका निभाई। ग्लैमर की इस दुनिया में जहाँ चौधरी साहब मुझे बड़ी-बड़ी पार्टियों में ले जाते तो उनके घनिष्ट मित्र डॉ. शर्मा हमेशा मेरे साथ रहते। सबसे मेरा परिचय कराते। इन पार्टियों में किस तरह संयत व्यवहार करना है, यह मैंने उनसे ही सीखा।

डॉ. शर्मा ने मुझे पर्यावरण विज्ञान में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। इसके लिए शोध-प्रबन्ध लिखना था। उनके सुझाव पर मैंने हिमालय में पेड़ों और जंगलों को बचाने के लिए चलाये गये 'चिपको आंदोलन' को ही अपनी थीसिस का विषय चुना। इसके लिए डॉ. शर्मा ने मुझे 'चिपको आंदोलन' के जन्मदाता श्री सुंदर लाल बहुगुणा जी से मिलवाया।

इसी तरह शर्मा जी ने मुझे अध्यात्म की ओर मोड़ा। मैंने मांस-मदिरा छोड़ दी। सत्संगों में जाने लगा। फिर सिरसा हजूर महाराज के 'डेरा सच्चा सौदा' गया और उनका शिष्य हो गया। इस मार्ग पर मैं शर्मा जी की ही प्रेरणा से आया, जिसके लिए मैं उनका सदैव ऋणी रहूँगा।

शर्मा जी के साथ मैंने भारत के अनेक कृषि संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों तथा अन्य संगठनों की यात्राएँ कीं। मैंने देखा कि सभी जगह कृषिवैज्ञानिक डॉ. साहब को अच्छी तरह जानते हैं और उनका आदर करते हैं। जहाँ भी हम जाते शर्मा जी को वहाँ की कृषि का,

वहाँ चल रहे अनुसंधान का पूरा ज्ञान होता और फिल्म की शूटिंग के समय जहाँ चौधरी साहब तकनीकी मार्गदर्शन करते, वहीं वैज्ञानिक दृष्टि से कोई शॉट न छूट जाये इसका ध्यान शर्मा जी रखते थे। हमने हैदराबाद में जाकर इक्रीसैट नामक अर्ध-शुष्क क्षेत्रों पर फसल अनुसंधान के अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र पर फिल्म बनाई। इसका आलेख 'काली मिट्टी में उजाले की किरणें' शीर्षक से शर्मा जी ने ही तैयार किया था। इस फिल्म को संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ ए ओ) ने विश्व खाद्य दिवस पुरस्कार के लिए चुना। हम सबको पुरस्कार मिला। बाद में और भी कई पुस्कार मिले।

इसी तरह केरल में कोट्टायम के निकट के रबड़ बागानों में जाकर हमने वहाँ के किसान इकट्ठे करके 'बूझो तो जानें' कार्यक्रम बनाया। इसमें भी किसानों से सवाल पूछने का काम डॉ. शर्मा ने ही किया था। उन्होंने रिहर्सल कराके मलयालम-भाषी किसानों से भी हिन्दी बुलवा ली। इस कार्यक्रम की भी बड़ी सराहना हुई।

किस विषय पर किस विशेषज्ञ को बुलवायें इस बारे में हम अक्सर शर्मा जी से ही सलाह करते थे। डॉ. शर्मा हमेशा ही अच्छे विशेषज्ञों के नाम सुझाते थे। पंत नगर के कृषि विश्वविद्यालय से उन्होंने रिकार्ड किये हुए विडियो कैसट मँगवाकर 'कृषि समाचार' को खूब चमका दिया।

जब मेरा ट्रांसफर 'दूरदर्शन' के स्पोर्ट्स-विभाग में हो गया तो मैं बड़ा ही दुखी था। लेकिन डॉ. शर्मा ने यहाँ भी मेरी हिम्मत बँधाई और कहा कि विभिन्न क्षेत्रों का अनुभव होना चाहिए। 'सेण्ट्रल प्रोडक्शन सेण्टर' (सीपीसी) का मुख्यालय खेलगाँव में ही है। डॉ. शर्मा भी खेलगाँव में रहते हैं। इस तरह उनसे संपर्क बना रहा, जिसके फलस्वरूप पाँच भारतीय वैज्ञानिकों तथा श्री सुंदर लाल बहुगुणा पर फिल्में बनाने की एक योजना को दूरदर्शन की स्वीकृति मिली। पहली फिल्म भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्व महानिदेशक डॉ. आर. एस. परोदा पर बनी और भारत के अतिरिक्त 'डी.डी. इण्टरनेशनल' चैनल के द्वारा 51 अन्य देशों में दिखायी गयी। इसके साथ ही महान कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन् पर 'हरित क्रांति से सदाबहार क्रांति तक' फिल्म की शूटिंग पूरी हो गयी है। मैंने देखा कि डॉ. स्वामीनाथन् जी डॉ. शर्मा को अपने परिवार का ही सदस्य मानते हैं। दोनों के बीच विगत40 वर्षों की निकटता है। इसके साथ ही हम प्रो. अब्दुल कलाम, डॉ. मशेलकर तथा डॉ. कुरियन पर भी फिल्में बनायेंगे। सबके लिए अनुसंधान और आलेख का दायित्व डॉ. शर्मा ही निभा रहे हैं।

इस पकी उम्र में भी उनका उत्साह देखते ही बनता है। साथ जाते हैं तो अपने बच्चों की तरह सबका ख्याल रखते हैं। ज्ञान का तो खजाना है उनके पास । वे उसे मुक्तहस्त से बाँटते हैं। ईश्वर उन्हें चिरायु करें। वे सदा भारतीय कृषि और किसानों की सेवा करते रहें।

प्रोड्यूसर,दिल्ली दूरदर्शन केन्द्र
सीपीसी, खेलगाँव
नई दिल्ली

'नामाराशि' शर्मा जी : क्या लिखूँ क्या छोड़ूँ

डॉ० रमेश सोमवंशी

नामाराशि का अनेक वरिष्ठ कृषि वैज्ञानिकों से सानिध्य रहा है। परन्तु संभवतः आप भारतीय हरित क्रान्ति के प्रेरक डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन से सर्वाधिक प्रभावित रहे हैं। आपने उनके साथ अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थान, फिलीपाइन्स में अपने छः माह के प्रवास के दौरान 'धान की कहानी' लिखी जो कि डॉ. स्वामीनाथन की कहानी है। इस पुस्तक का अंग्रेजी प्रारूप 'द स्टोरी ऑफ राइस' भी उपलब्ध है।

नेशनल फैलो,
विकृतिविज्ञान प्रभाग,
भारतीय पशुचिकित्सा
अनुसंधान संस्थान,
इज्जतनगर -243122(उ.प्र.)

सिक्के का दूसरा पहलू

डॉ. नरेन्द्र व्यास

मैं रमेशदत्त शर्मा या कहें डॉ. रमेश दत्त शर्मा, या कहें डॉ. आर.डी. शर्मा, या कहें शर्मा जी के व्यक्तित्व के उस पहलू की बात करना नहीं चाह रहा जो विज्ञान जगत् में हिन्दी के माध्यम से लिखने वाले कुछ आधुनिक अग्रणी शिखर-पुरुषों की पंक्ति में आसीन है। मैं तो यहाँ इस व्यक्ति के उन कुछ अनछुए पहलुओं को उजागर करना चाहता हूँ जो उसे हिन्दी जगत् के सफल विज्ञान लेखक के साथ-साथ एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व के धनी 'होमो इरेक्टस' के रूप में स्थापित करने में सहायक होंगे।

शायद कम लोग ही जानते होंगे कि रमेश विज्ञान लेखक के साथ-साथ अच्छा कवि भी है। 'कवि-हृदय' होना एक बात है और 'अच्छा कवि' होना दूसरी बात। हम लोग तो कहा करते हैं कि रमेश 'पारस पत्थर' है। जिस विषय को छूता है, सोना बना देता है। जो लोग कवि रमेश को जानना चाहें, उनके लिए पर्याप्त शोध-सामग्री उपलब्ध है।

रमेश का व्यक्तित्त्व कई परतों से बना है। सबसे ऊपर वाली परत विज्ञान लेखन की परत है। इससे निचली परत कवि-संरचना वाली है। तीसरी परत उसके खिलाड़ीपन से बनी है - सभी प्रकार के 'खिलाड़ीपन' से अभिधामूलक और लक्षणामूलक दोनों अर्थों में। उसके लेखन और मानवीय व्यवहार वाले खिलाड़ीपन को कई लोगों ने देखा-भुगता होगा, पर अभिधार्थ वाले खेलों में रमेश की पारंगतता (पारंगति नहीं) की पहचान हम लोगों ने काफी की है। मेरी जानकारी में जिन दो खेलों में रमेश का लोहा हम सहकर्मी बहुत पहले से ही मानते आ रहे हैं, वे हैं : कैरम और बैडमिंटन वाले खेल। कैरम में रमेश जी की तर्जनी और अँगूठा मिलकर तथा बैडमिंटन में उसकी कलाई जो कमाल दिखाती थी, उससे हम साथी खिलाड़ी सदा ही चारों खाने चित्त होते रहेंगे। बैडमिंटन में 13-0 वाले हैंडीकेप पाइंट लेकर भी जीत की वरमाला मेरे (या हमारे) गले में कभी पड़ी हो- ऐसा शुभदिन याद नहीं आता। हो सकता है यदा-कदा जीते भी होंगे तो रमेश के पार्टनर की गलती से या फिर उसकी इस 'कृपा' से कि 'चलो! एकबार इन्हें भी जीत का स्वाद चख लेने दो।'

रमेश के व्यक्तित्व निर्माण की जो अंतर्धारा या सबसे गहरी परत है, वह है- उसकी मानवीय संवेदना का 'धैर्य' वाला गुण और 'सदा मंद-मुद मुस्कराते रहने वाला पक्ष'। जिन स्थितियों में हम अपना आपा खो बैठते हैं या आगबबूला हो जाते हैं उन विषम परिस्थितियों भी 'स्थितिप्रज्ञ' रहना रमेश की ही विशेषता है। अपनी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष आलोचना को सुन-जानकर भी बिना प्रतिकूल अनुक्रिया प्रकट किये उसे हँसकर टाल देना कोई रमेश से सीखे! यही नहीं, दूसरे के बारे में प्रतिकूल टीका-टिप्पणी से यथासंभव बचते रहना या कहें अनावश्यक निंदा अथवा शिकायत न करना ही रमेश की सफलता का सबसे बड़ा राज रहा है।

रमेशदत्त शर्मा हिन्दी में लिखित विज्ञान लेखन के आधुनिक पुरोधा हैं। पत्र-पत्रिकाओं, रेडियो, टी वी आदि पर कार्यक्रम वर्षों तक प्रकाशित-प्रसारित होते रहे हैं। अब उन्होंने 'छोटे-मोटे' कामों से किनारा कर लिया है। इनके स्थान पर बड़े-बड़े शोधकार्यों और प्रबंधन प्रधान दायित्वों से ही इन्हे अब फुरसत नहीं मिलती। विज्ञान जगत् में उनका कद बहुत ऊँचा हो गया है। फिर भी व्यक्तिगत संबंधों के पूर्ववत् निर्वहण में उनमें कोई कमी नजर नहीं आती। समय की दूरियाँ पार कर लेने के बाद भी हम लोग जब कभी यहाँ-वहाँ मिलते हैं तो आदर और स्नेह का वही पुराना प्रवाह उमड़ आता है। संस्मरणों में खोये हम लोग कई वर्ष पीछे अपने उसी पुराने युवाजीवन में लौट जाते हैं। लगता ही नहीं कि आधी सदी का लंबा अंतराल हमारे 'कल' और 'आज' के बीच पसरा-फैला है। वही सौम्य व्यक्तित्व का धनी रमेश 'जो पहले था

शेष पृष्ठ 40 पर

चुके नहीं अभी रमेशदत्त शर्मा

प्रमोद जोशी

सन् 1966 के अगस्त माह में मैंने और श्री देवेन्द्र मेवाड़ी ने दिल्ली के पूसा इन्स्टीट्यूट में अनुसंधान सहायक पद पर नौकरी शुरू की। देवेन्द्र कालेज शिक्षा के दौरान विज्ञान कथा तथा लेख लिखने लगे थे तथा साहित्य तथा पत्रिकाओं के पठन-पाठन में हम दोनों की ही रुचि थी। रमेश दत्त शर्मा उस समय अपने लोकोपयोगी विज्ञान लेखन के चरम पर थे और हर सप्ताह 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'नवनीत' या 'कादम्बिनी' में उनका कोई न कोई लेख अवश्य छपता था। हम दोनों उनके लेखन के कायल थे। देवेन्द्र की पहल पर उसी दौरान मैं भी लेखनोन्मुख हुआ। रमेश जी से मुलाकात हुई तो उन्होंने मेरे नौसिखिया लेखन को खूब परवान चढ़ाया और कुछ गुरुमंत्र भी दिये, बस सिलसिला चल निकला। अपनी विज्ञान रचना-धार्मिता के सफर के दौरान रमेश जी रोल मॉडल के रूप में सदा साथ बने रहे। सन् 1969 में जब शर्मा जी पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय में देश के पहले विश्वविद्यालयी हिन्दी ग्रन्थ निर्माण निदेशालय की स्थापना में योगदान देने वहाँ चले गये तो उन्होंने मुझे तथा देवेन्द्र मेवाड़ी को भी बुलवा लिया।

शहरी गरमा-गरमी से दूर हरे-भरे तथा शान्त वातावरण में रमशे दत्त जी के साथ सबसे सार्थक दिन थे। एक नई कृषि पत्रिका का आरंभ किया तथा कृषि पत्रकारिता में प्रस्तुति को एक नया आयाम देने का प्रयास हुआ। कृषि पत्रकारिता तथा वैज्ञानिक लेखन में अनुवाद में स्वदेशीकरण, सरलीकरण तथा लोकविज्ञानीकरण की एक नयी विधा का विकास किया गया और वैज्ञानिकों तथा विज्ञान लेखकों के बीच सतत अंतरंग सहयोग द्वारा हिन्दी में मौलिक विज्ञान लेखन की 'पंतनगर शैली' भी स्थापित की गयी। आने वाले वर्षों में इसके परिणाम भी सामने आये। हिन्दी के नाम से ही बिदकने वाली वैज्ञानिक बिरादरी से दस साल में ही सैकड़ों हिन्दी लेखक उत्पन्न हुए और हिन्दी माध्यम से कृषि तथा पशुचिकित्सा की शिक्षा देने वाला पंतनगर देश का पहला विश्वविद्यालय बना। निस्संदेह इसमें शर्मा जी की सक्रियता और समर्पण का महती योगदान था। अत्यधिक कार्यालयी व्यस्तता के बावजूद हर शाम हम विज्ञान के लोकप्रियकरण पर चर्चा करते। रमेश जी कदम-कदम पर उत्साहवर्धन करते, जरूरी सलाह देते, विषय की आवश्यक उपलब्ध जानकारी भी मुहैया कराते और तैयार लेखों को तराशते भी। नये लेखकों के लिए 'ना' शब्द उनके शब्दकोष में नहीं था। मेरे लेखों के लिए तो उपयुक्त चित्र भी अनेक बार उन्होंने अपने संग्रह से उपलब्ध कराये। मुझे आश्चर्य होता है कि दूसरों के प्रति इतनी सहृदयता रखने तथा समय निकालने के बाद वे अपने लेखन के लिए समय कब निकालते हैं। विषय चुनने के बाद कब सामग्री जुटाते हैं, कब आत्मसात् करते हैं और कब उसे कागज पर उतारते हैं। दिन में कितनी भी व्यस्तता हो व काम हो रमेश जी रात खाने के तुरन्त बाद सो जाते,फिर डेढ़-दो बजे रात उठते, लिखते और लेखन पूरा करने के बाद चार-पाँच बजे फिर थोड़ा सोकर बची खुची नींद पूरी कर लेते। संदर्भों को याद रखने, उनमें समन्वय तथा अत्यन्त रोचक ढंग से प्रस्तुत करने की अपनी नैसर्गिक क्षमता का साठ-सत्तर के दशकों में उन्होंने उत्तरोत्तर विकास किया। अपनी विलक्षण प्रतिभा के बूते पर शर्मा जी ने विज्ञान लेखन की अपनी एक विशिष्ट शैली तथा शब्दावली का विकास किया जो बेहद रोचक, सहज तथा अनूठी थी।

सन् 1970 के मध्य में रमेश जी कुछ बेहतर भविष्य के लिए और कुछ पारिवारिक कारणों से दिल्ली चले गये इस वादे के साथ,कि जल्दी ही मुझे भी दिल्ली बुला लेंगे।

शेष पृष्ठ 42 पर

ना कहना नहीं सीख पाये शर्मा जी

जगदीप सक्सेना

आदरणीय रमेशदत्त शर्मा जी से मेरा परिचय उनकी रचनाओं के माध्यम से हुआ और यह बात है सन् 70 के दशक की। उस समय की लोकप्रिय पत्रिकाओं में जब-तब उनके वैज्ञानिक लेख प्रकाशित होते रहते थे। हम छात्र (उस समय मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी.एस-सी. कर रहा था) सोचते थे कि ये कोई बुजुर्ग सज्जन हैं, जो अपने जीवन भर के ज्ञान और अनुभव को सँजोकर हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। फिर एक बार 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में प्रकाशित लेख के साथ जब उनका फोटो भी देखा तो महसूस हुआ, अरे! ये तो बुजुर्ग नहीं हैं। तभी यह भी पता लगा कि शर्मा जी किसी 'खेती' नामक पत्रिका के संपादक भी हैं। सच कहें तो उसी दिन यह भ्रम टूटा कि कामयाब लेखन के लिए बालों का सफेद होना जरूरी नहीं है। युवावस्था में भी मेहनत और लगन कमाल दिखा सकती है। इसके बाद एक बार शर्मा जी को इलाहाबाद में एक समारोह में भी देखा, पर कोई खास बातचीत नहीं हो पायी। दरअसल उस समय तक दिल्ली आने और विज्ञान लेखन को अपनी आजीविका बनाने का कोई पक्का इरादा नहीं बन पाया था।

संयोग से शर्मा जी से अगली मुलाकात एक ऐसी जगह पर हुई जहाँ हम दोनों ही अपने व्यावसायिक जीवन में एक-एक पायदान ऊपर पहुँचने के लिए प्रयत्नरत थे। मैं बात कर रहा हूँ भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) के कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल के कार्यालय की जो उन दिनों (सन् 1982 का उत्तरार्ध) कनॉट प्लेस में निर्मल टावर में हुआ करता था। शर्मा जी प्रधान संपादक (हिन्दी) के पद के लिए साक्षात्कार देने आये थे और मैं सहायक संपादक (हिन्दी) के लिए। शर्मा जी अपने साथ एक बक्सा भी लाये थे, जिसमें ढेरों रचनाएँ, पत्र-पत्रिकाएँ किताबें वगैरह भरी पड़ी थीं। इसे भी संयोग ही कहना होगा कि हम दोनों कामयाब हुए और इस तरह नियति ने शर्मा जी के साथ लंबा सफर तय करने का अवसर दिला दिया।

पहली फरवरी सन् 1983 को जब मैंने नये सहायक संपादक के रूप में शर्मा जी के कमरे में कदम रखा तो न जाने क्यों मन में कोई भय, कोई आशंका नहीं थी। संभवतः यह शर्मा जी के व्यक्तित्व का करिश्माई प्रभाव था कि एक अपनेपन का अहसास दिलो-दिमाग पर छा गया। यह असर आज दो दशक बाद भी उतना ही ताजा है, जितना उस समय था। सन् 1999 में अवकाशप्राप्ति के बाद भी शर्मा जी से, उनके परिवार से, एक अपनापा बना हुआ है, जो शायद जीवनभर बना रहेगा। हालाँकि इससे पूर्व मैंने शर्मा जी के साथ किसी प्रकार का कोई कार्य नहीं किया था, परन्तु उन्होंने मेरे ऊपर अगाध विश्वास दर्शाते हुए कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण प्रकाशनों का जिम्मा सौंप दिया। मैंने पूरा प्रयास किया कि उनका विश्वास टूटे नहीं परन्तु इसमें मैं कहाँ तक कामयाब हुआ, यह तो वही बता सकते हैं। फिर तो रोज ही शर्मा जी के साथ चित्रों को छाँटने आदि कार्यों का सिलसिला चल निकला, जो उनकी अवकाशप्राप्ति तक अनवरत जारी रहा। बाद में शर्मा जी आईसीएआर के पूरे सूचना एवं प्रकाशन निदेशालय के निदेशक भी बन गये, परन्तु हमारे बीच उनके उच्च पद के कारण किसी किस्म की कोई दूरी नहीं पनप पायी। मैं और मेरे अनेक साथियों का उनके साथ पूर्ववत् निकट संबंध बना रहा है।

यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि शर्मा जी ने अपने व्यावसायिक जीवन में कभी भी उच्च सरकारी पदों से जुड़ी औपचारिकताओं को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। उनके कमरे के दरवाजे सभी वर्गों के अधिकारियों-कर्मचारियों के लिए सदैव खुले रहते थे। पहले

सामयिक विज्ञान लेखन : चलती रहे कलम

डॉ॰ मनोज पटेरिया

'हंसोड़ जीन', 'विधाता के धंधे में बंदे का दख़ल', 'उम्र चोरों के गाँव में', 'इन्सानी फसलें', 'जैवप्रौद्योगिकी के चमत्कार', 'धान की कहानी' .... आदि आदि। यह एक झलक है, समसामयिक विज्ञान लेखन के सशक्त हस्ताक्षर डॉ. रमेश दत्त शर्मा की कालजयी रचनाओं की, जिन्होंने हिन्दी विज्ञान लेखन का अपना स्वयं का एक स्वर्णिम इतिहास रचा। शायद विज्ञान लेखन के प्रहरियों को भी आभास नहीं हुआ कि समसामयिक विज्ञान लेखन की यह भागीरथी कहाँ-कहाँ होकर बही, कितनी लहलहाई और कितने उपवनों को सींचा और कितने नये मंजर बनाये। चाहे समाचार पत्र-पत्रिकाएँ हों या रेडियो - टेलीविजन हो या जन सम्पर्क कार्यक्रम, शर्मा जी (अपनेपन से ज्यादातर उन्हें यही पुकारते हैं) के लेखन और भाषा का जादू सब जगह चला। शीर्ष पत्र-पत्रिकाओं से लेकर छोटी पत्र-पत्रिकाओं तक शर्मा जी के लेखन की धारा प्रवाहित होती रही है। चोटी के वैज्ञानिकों से लेकर साहित्यकारों तक उनके मन के तार जुड़े हैं।

ऐसे समय में, जब ज्यादातर विज्ञान लेखक पूर्व स्थापित विज्ञान या पाठ्यक्रम आधारित लेखन को ही विज्ञान लेखन का पर्याय मान रहे थे, तब शर्मा जी ने विज्ञान लेखन की एक अलग धारा शुरू की - सामयिक विज्ञान लेखन की धारा। आज जो नयी विज्ञान और प्रौद्योगिकी खोजें की जा रहीं हैं, उनका व्यापक चित्रण होता था। किस प्रकार यह नया विज्ञान मानवता को लाभ या नुकसान पहुँचा सकता है- इस पर बेबाक टिप्पणियाँ होतीं थीं। कहने का मतलब यह कि शायद तब पहली बार लोगों को शर्मा जी के लेखन के माध्यम से एक नई हवा मिली, और लोगों को 'स्कूली विज्ञान' या 'पूर्वस्थापित' सदियों पुराने वैज्ञानिक सिद्धान्त से बाहर निकलकर आज के विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बारे में जानने-समझने और उस पर अपनी राय बनाने का मौका मिला। विज्ञान लेखन के इतिहास में यह एक बहुत बड़ा परिवर्तन था, हालाँकि 'पूर्वस्थापित विज्ञान' लेखन के ज्यादातर अनुयायी, जिनका दिमाग पुराने ढर्रे से निकलने को तैयार नहीं था, न तो इस नवपरिवर्तन को अंगीकार कर पाये और न इसका अनुकरण कर पाये। शायद यही कारण है कि आज सार्वभौमिक विज्ञान संचार के इस दौर में भी 'नव विज्ञान लेखन' करने वालों का लगभग अकाल-सा है।

शर्मा जी से पहली मुलाकात नयी दिल्ली के कृषि भवन में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के निदेशक (प्रकाशन एवं सूचना), डॉ. विद्या शरण भट्ट के पास संभवतया 1981 में हुई थी। तब मैं 'विज्ञानपुरी' नाम की एक पत्रिका निकालता था। हालाँकि एक दूसरे के लेखन के माध्यम से हमारा परिचय पहले से ही था, इसलिए तालमेल में देर न लगी। शर्मा जी कृषि दर्शन कार्यक्रम दूरदर्शन पर पेश कर रहे थे। उन्होंने अगले दिन मुझे दूरदर्शन बुलाया; कहा तुम्हारा इंटरव्यू करेंगे, तुम्हारे आविष्कारों के बारे में। इस प्रकार शर्मा जी के साथ मिलने-मिलाने और विज्ञान लेखन के विविध पहलुओं पर चर्चा करने का सिलसिला चल पड़ा। शर्मा जी के मार्गदर्शन, प्रेरणा और उत्प्रेरण हमेशा काम आये, खासतौर पर विषम परिस्थितियों में। एक बात मैंने देखी कि शर्मा जी का नाम प्रायः सभी विज्ञान लेखक बड़े सम्मान और आदर के साथ लेते हैं। मैं भी उनमें से एक हूँ। मैंने उन्हें कभी नाराज होते नहीं देखा। शायद यह भी उनकी लोकप्रियता का एक कारण हो। उनकी इसी लोकप्रियता ने उन्हें इण्डियन साइंस राइटर्स एसोसिएशन (इस्वा) का 1999 में अध्यक्ष बनाया। मुझे उनके साथ इस्वा के सचिव के रूप में काम करने का मौका मिला। एक मौका और मिला था, उनके साथ काम करने का-आईसीएआर में सहायक सम्पादक के रूप

पी.ए. से पूछना, समय लेना जैसी 'बाधाएँ' कभी हमारे रास्ते में नहीं आयीं। उनके दरबार में जो भी पहुँचा, उसकी सुनी गयी और हर संभव सहायता भी की गयी। अपने सहयोगियों, मित्रों, लेखकों की खातिर शर्मा जी सरकारी नियमों की उपेक्षा करने से भी नहीं चूकते थे इसलिए अक्सर प्रशासन विभाग से और कई बार उच्च अधिकारियों से भी उनकी ठनी रहती थी। इसी कारण जहाँ तक संभव हुआ दूसरों की सहायता की और कभी किसी को 'ना' नहीं कहा। शर्मा जी के संगी-साथियों और वरिष्ठ अधिकारियों ने कई बार उन्हें समझाया कि प्रशासनिक दायित्वों के उचित निर्वाह के लिए 'ना' कहना अवश्य आना चाहिए। परन्तु शर्मा जी ने किसी की नहीं सुनी। दफ्तर में इससे कई बार उलझनें भी पैदा हुईं। एक बार दो कर्मचारियों के बीच तकरार होने पर शर्मा जी ने दोनों की ही शिकायतों और तर्कों को स्वीकार करते हुए उपयुक्त कार्रवाई की सिफारिश कर दी। दफ्तर में यह बात आम प्रचलित थी कि शर्मा जी से किसी भी तरह के प्रार्थना पत्र हस्ताक्षर करवाये जा सकते हैं। हम लोग अक्सर हँसी में चर्चा करते थे कि एक दिन शर्मा जी से रोजाना देर से दफ्तर आने की अर्जी मंजूर करा जी ली जाय। इसी सदाशयता के कारण भीतर ही भीतर शर्मा जी का विरोध करने वाले भी उनसे अपने मतलब के काम निकाल ले गये। कई बार तो शायद सब कुछ जानते-बूझते हुए भी शर्मा जी ने अपने विरोधियों का भला किया।

विज्ञान लोकप्रियता से जुड़ी तमाम व्यस्तताओं को निभाते हुए शर्मा जी ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के प्रकाशन विभाग के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान किया। हिन्दी की दो पत्रिकाएँ ('फल-फूल' और 'कृषि चयनिका') उन्हीं की सोच का परिणाम हैं। कृषि विज्ञान के क्षेत्र में पुस्तक प्रकाशन हेतु नये-नये विषयों को चुनना, उनके लिए उपयुक्त लेखक ढूँढना और समय पर पुस्तक तैयार करवा लेने में उन्हें महारत हासिल थी। कृषि तथा सम्बद्ध विषयों के अनेक लेखक शर्मा जी की खोज हैं और उनके लेखन को तराशने में भी उनका योगदान रहा है। शर्मा जी इन लेखकों को देश भर से ढूँढ-ढूँढ कर सामने लाये। वैज्ञानिकों के अलावा उन्होंने कई किसानों को भी कृषि का लेखक बना दिया। शर्मा जी ने कृषि लेखन की कई शैलियाँ और विधाएँ भी विकसित कीं तथा उनके लिए नये लेखक भी तैयार किये। आईसीएआर द्वारा पद्य में प्रकाशित पुस्तकें इसकी प्रमाण हैं। शर्मा जी के प्रयासों के कारण ही 'प्रकाशन एवं सूचना प्रभाग' को 'कृषि सूचना एवं प्रकाशन निदेशालय' का ऊँचा दर्जा हासिल हो सका। इस निदेशालय के निदेशक के रूप में शर्मा जी की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि तमाम प्रशासनिक दायित्वों के बावजूद शर्मा जी निरंतर रचनात्मक कार्यों में भी जुटे रहे। लेखन, संपादन, अनुवाद आदि कार्यों को तत्परता से निपटाते रहे ।

मुझे शर्मा जी जैसे सहृदय सरल और दक्ष अधिकारी व सच्चे-अच्छे इंसान के साथ लगभग सत्रह वर्ष तक कार्य करने का अवसर मिला। इसे मैं अपने व्यावसायिक जीवन का सबसे बड़ा सौभाग्य मानता हूँ । ईश्वर शर्मा जी को लंबा, स्वस्थ व सक्रिय जीवन प्रदान करे तथा मुझे अगले जन्म में एक बार फिर शर्मा जी के साथ कार्य करने का सुअवसर।

98 वसुंधरा अपार्टमेंट्स,
प्लाट नं. 44 सैक्टर 9, रोहिणी
दिल्ली-85 फोन : 27861148

पृष्ठ 37 का शेष .....

वह अब भी है'। बदला है तो उसके लम्बे बालों का रंग, काया में झाँकती थोड़ी स्थूलता और साँस का फूलना। पिछले दिनों चण्डीगढ़ में मिलने पर मैंने अपने स्वभाव के अनुरूप उनकी अतिरिक्त स्थूलता के प्रति आगाह किया था। ईश्वर से अपने अनुज की दीर्घायु होने की कामना करता हूँ। अग्रज हूँ तो आशीर्वाद स्वरूप यह कहने का मेरा अधिकार है : आयुष्मान भव, यशस्वी भव।

(पूर्व निदेशक/प्रधान संपादक)
केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, न. दि.
सी-4ए/52बी जनकपुरी, नई दिल्ली -110058
फोनः 011-25593428 निवास

में । तब शर्मा जी प्रधान सम्पादक थे, लेकिन तब मैंने कार्यभार नहीं सँभाला था। इस्वा का अनुभव अच्छा रहा। मतैक्य और विज्ञान के क्षेत्र में कुछ करने की मिश्रित अभिलाषा काम आयी। पहली बार हम इस्वा के कार्यक्रम दिल्ली से बाहर ले जाने में सफल हुए। अलग-अलग स्थानों में इस्वा चैप्टर्स खुले। पहली बार इस्वा ने राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् के सहयोग से लखनऊ में नवम्बर 2001 में पहली बार राष्ट्रीय विज्ञान संचार कांग्रेस का आयोजन किया। शर्मा जी के कुशल रैपर्ट और गुडविल का फायदा इस्वा को भी मिला।

प्रिंट मीडिया के अलावा, शर्मा जी रेडियो फीचर, टीवी, स्क्रिप्ट, पटकथा, नाटक और विज्ञान कथाएँ भी लिखते हैं। वैज्ञानिक साक्षात्कार में उन्हें खासी महारथ हासिल है। शायद कम लोग जानते होंगे कि शर्मा जी कविताएँ भी लिखते हैं। विज्ञान लोकप्रियकरण के क्षेत्र में बहुमुखी प्रतिभा के धनी शर्मा जी को राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् से भारत सरकार का संचार माध्यमों में सर्वोत्तम विज्ञान कवरेज के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुका है। यह उनकी वैज्ञानिक अभिरुचि का ही द्योतक है कि जब ज्यादातर विज्ञान लेखक बन्द कमरों में अंदर बैठकर अपनी रचनाएँ लिख देते हैं, तब शर्मा जी शायद ही कोई ऐसी वैज्ञानिक गतिविधि हो, जिसमें शामिल न होते हों। आमतौर पर उनका प्रयास रहता है कि समकालीन वैज्ञानिक विषयों को अपने लेखन के दायरे में अवश्य लाया जाये।

समय के साथ पनपने वाले विज्ञान और टेक्नोलाजी के बारे में अथक, अनवरत, सजग, समर्पित, जुझारू और सार्थक लेखन की यह भगीरथी यूँ ही बहती रहे और आधुनिक ज्ञान विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उजियारा जन-जन तक पहुँचे।

आनरेरी सचिव,
इण्डियन साइंस राइटर्स एसोसिएशन,
25/3, सेक्टर-1, पुष्प विहार,
नई दिल्ली-110017

पृष्ठ 38 का शेष ......

उन्होंने इसके प्रयास भी बहुत किये पर एक तो महानगरीय लेखक -संपादक दादाओं के 'बाहरी संक्रमण को दूर रखने के लिए बिछाये संगरोध कवच' के चलते और कुछ पंतनगर के कोलाहल व आपाधापी मुक्त वातावरण में रमने से प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता के प्रखर न रहने के कारण मैं पंतनगर में ही बना रहा यद्यपि इस बात का कष्ट उन्हें आज भी सालता है कि मुझे दिल्ली से लाकर उन्होंने पंतनगर में फँसा दिया और खुद दिल्ली लौट गये। सच कहूँ तो मेरे विज्ञान लेखन के लिए पंतनगर प्रवास पर्याप्त फलदायी रहा और मेरा अपना मानना है कि पुनः दिल्ली जाकर शर्मा जी ने विज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए तो काफी कुछ किया पर विज्ञान लेखन को उनसे जितनी अपेक्षाएँ थीं वे कदाचित् पूरी नहीं हो पायीं। उनमें जितनी प्रतिभा है, जितनी क्षमता है, उसे देखते हुए उनकी प्रकाशित रचनाओं का आँकड़ा हजार पर नहीं अटकना चाहिए था। उसे 10 हजार से ऊपर होना चाहिए था। जिन-जिन पदों को उन्होंने सुशोभित किया, जितनी समितियों -संगठनों से वे जुड़े वह उनकी सफलता की यात्रा को तो अवश्य परिलक्षित करता है, पर एक साधक की साधना की कहानी को नहीं।

हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की अभिवृद्धि के लिए रमेश जी की प्रतिबद्धता तथा योगदान के लिए मैं उन्हें नमन करता हूँ। पर रमेश भाई अभी तो आप जवान हैं और आपकी लेखनी भी। उसे धार दीजिए। हिन्दी विज्ञान साहित्य को आपकी जरूरत भी है ओर आपसे आशा भी।

हलद्वानी
उत्तरांचल

हमनाम-ओ-हमजुल्फ

रमेश उपाध्याय

यह बीसवीं शताब्दी का सातवाँ दशक था। हिन्दी साहित्य में यह सातवाँ दशक अपने 'साठोत्तरी लेखन' के कारण प्रसिद्ध है। मैं भी साठोत्तरी पीढ़ी का नया लेखक था और 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में उप-संपादक के रूप में काम करने वाला नया-नया पत्रकार।हालाँकि मैं वहाँ अभी 'प्रोबेशन' पर ही था, लेकिन कहानी-लेखन में कुछ नाम कमा चुका था। मेरा काम आयी हुई सामग्री का संपादन करना ही नहीं, बल्कि सामग्री जुटाना भी था। इसलिए कथाकारों और विज्ञान लेखकों से संपर्क करना और उनसे लिखवाना मेरे काम का हिस्सा था। इस सिलसिले में जिन दो विज्ञान लेखकों से मेरा परिचय हुआ, वे संयोग से मेरे नामराशी या हमनाम थे- रमेश दत्त शर्मा और रमेश वर्मा। रमेश वर्मा तो साहित्य-वाहित्य को फालतू समझते थे, लेकिन रमेश दत्त शर्मा उसमें कुछ रुचि रखते थे। एक दिन वे मुझसे मिलने आये तो विज्ञान संबंधी अपना लेख देने के साथ-साथ एक और लेख मुझे देते हुए बोले, " हास्य-व्यंग्य की चीज लिखी है, इसे भी पढ़कर देखिये।" मैंने देखा लेख का शीर्षक था - 'हमें रमेशिस्तान चाहिए।' मुझे शीर्षक आकर्षक लगा और मैंने उनका लेख उसी समय पढ़ लिया। उन दिनों पंजाब में खालिस्तान की माँग उठ रही थी। खालिस्तान की तर्ज पर रमेशिस्तान की माँग का व्यंग्य-विनोद मुझे पसंद आया। उन दिनों रमेश नाम के कई लेखक थे, जिनकी चर्चा उस लेख में की गयी थी, जैसे कथाकार रमेश बक्षी और रमेश उपाध्याय, कवि रमेश गौड़, गीतकार रमेश रंजक, विज्ञान लेखक रमेश वर्मा और रमेश दत्त शर्मा इत्यादि। शर्मा जी के लेख में रमेशों की जनसंख्या के आधार पर यह माँग की गयी थी कि हमें हिन्दी साहित्य में एक अलग और विशिष्ट स्थान मिलना चाहिए।उस स्थान का नाम होगा 'रमेशिस्तान' और उसमें रमेश ही रमेश रहेंगे। अन्य लोग उसमें आ-जा सकेंगे, लेकिन कुछ नियमों और शर्तों का पालन करने पर ही।

'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' का (या 'हिन्दुस्तान टाइम्स' प्रकाशन समूह का) दफ्तर कनॉट प्लेस में था और कनॉट प्लेस की ही रीगल बिल्डिग में था एक टी-हाउस, जिसमें बहुत-से लेखक और पत्रकार रोज शाम को आते थे और चाय-काफी पीते हुए दुनिया भर की बातें करते थे। उस शाम मैं शर्मा जी के साथ वहाँ पहुँचा, तो रमेश बक्षी मिल गये। हमने उन्हें 'रमेशिस्तान' के बारे में बताया, तो वे खुश हो गये और अपनी आदत के मुताबिक चुहलबाजी करने लगे। वे प्रयोगधर्मी लेखक और विनोदी स्वभाव के व्यक्ति थे। मेरे कहने पर वे शर्माजी के लेख को आगे बढ़ाते हुए उसके 'सहयोगी लेखक' बनने को तैयार हो गये। तय हुआ कि लेख का तीसरा और अंतिम हिस्सा मैं लिखूँगा।

रमेश बक्षी उस लेख को ले गये और अगले दिन आगे का अपना हिस्सा लिख लाये। उसके बाद मैंने लेख का अंतिम भाग लिखा और पूरा लेख टाइप कराकर संपादक को दिखाया। उन दिनों 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सम्पादक रामानन्द 'दोषी' थे और वे भी विनोदी स्वभाव के थे। लेख पढ़कर वे खुशी से उसे छापने को तैयार हो गये। कार्टूनिस्ट रंगा उस समय उनके पास ही बैठे थे। 'दोषी' जी ने उनसे हम तीनों के कार्टून बनाने के लिए उसी समय कह दिया।

इस प्रकार तीन रमेशों द्वारा लिखा गया वह लेख रंगा के बनाये कार्टूनों के साथ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में 'हमें 'रमेशिस्तान' चाहिए' शीर्षक से छपा। शीर्षक के नीचे लेखकत्रय का नाम इस रूप में छपा-रमेश (बक्षी+उपाध्याय) दत्त शर्मा।

उस लेख में कई मनोरंजक बातें थीं। अब मैं उनमें से बहुत-सी बातें भूल गया हूँ। लेकिन एक बात मुझे स्पष्ट रूप से याद है । रमेश बक्षी ने उस लेख के अपने हिस्से में लिखा था कि रमेशिस्तान में अन्य लेखकों को भी स्थान दिया जा सकता है, बशर्ते कि वे अपने नाम के आगे

'रमेश' उपनाम जोड़ने को तैयार हों,जैसे -सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय 'रमेश'!

इस तरह रमेश दत्त शर्मा से मेरी दोस्ती हुई। हम हमनाम थे, इसलिए एक-दूसरे के नाम से नहीं पुकारते थे। मुझे अपने लिए यह आदरसूचक संबोधन कुछ अटपटा लगता था, क्योंकि शर्मा जी उम्र में मुझसे बड़े थे, मुझे ज्यादा पढ़े-लिखे थे, विवाहित थे और एक स्थायी सरकारी नौकरी करते थे; जबकि मैं इण्टरमीडिएट के बाद पढ़ाई छोड़कर कमाई करने लगा था और अब सात साल बाद दिल्ली विश्वविद्यालय के पत्रकार पाठ्यक्रम से बी. ए. की परीक्षा देने की तैयारी कर रहा था, अविवाहित था, दिल्ली में अकेला रहता था और मेरी निजी क्षेत्र की नौकरी भी अभी कच्ची ही थी। मेरी रुचि विज्ञान में थी और मेरा बस चलता, तो मैं भी शर्मा जी की तरह एम.एस-सी. करता, लेकिन पारिवारिक परिस्थितियों ने मुझे विधिवत शिक्षा पाने से वंचित करके विज्ञान की जगह कला का विद्यार्थी बना दिया था। फिर भी अपनी रुचि के कारण मैं शौकिया तौर पर विज्ञान का अध्ययन और वैज्ञानिक विषयों पर लेखन करता था। और इसी आधार पर मुझे 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में 'विज्ञान-वार्ता' नामक स्तंभ के संपादन की जिम्मेदारी दी गयी थी।सो एक दिन मैंने उनसे कहा, "शर्मा जी, आपका मुझे आदरपूर्वक 'उपाध्याय जी' कहना अटपटा लगता है। क्या आप मुझे किसी और तरीके से संबोधित नहीं कर सकते?" यह सुनकर शर्मा जी आदतन जोर से हँसे और बोले, "आप मेरे लेखों के संपादक हैं और संपादक लेखक से हमेशा बड़ा होता है!"

उनकी हँसी में व्यंग्य भी था, लेकिन वह चुभने वाला व्यंग्य नहीं था। इस तरह का हास्य और व्यंग्य शर्मा जी की स्वाभाविक विशेषता है, जो उनके व्यक्तिगत व्यवहार में ही नहीं बल्कि उनके लेखन में भी विद्यमान रहती है। विज्ञान लेखन एक गंभीर काम है, लेकिन शर्मा जी गंभीर से गंभीर विषय को भी ऐसे हल्के-फुल्के अंदाज में प्रस्तुत करते हैं कि विज्ञान क-ख-ग न जानने वाला साधारण पाठक भी उनका लेख आसानी से पढ़ जाये। शायद यही कारण है कि वे इतने सफल और लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं। इतना ही नहीं, उन्होंने अपने इस गुण से हिंदी के अन्य विज्ञान लेखकों को भी प्रभावित किया है, जिसमें से कुछ की भाषा और शैली पर शर्मा जी का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। मैं उनके इस गुण का शुरू से ही प्रशंसक रहा हूँ। वैसे भी मुझे हँसने-हँसाने वाले लोग पसंद हैं और मेरे दोस्तों में ज्यादातर ऐसे हैं, जो दिल खोलकर हँसते-बोलते हैं।

दोस्ती कुछ और बढ़ी तो पता चला कि हम दोनों का जन्म प्रदेश के एटा जिले में हुआ है और हम मूलतः ब्रजभाषी हैं। हालाँकि हम ब्रज में कभी बात नहीं करते, लेकिन हँसने-हँसाने के लिए अपने देशज मुहावरों, लोकोक्तियों और साहित्यिक सूक्तियों का इस्तेमाल सहज ही कर लेते हैं। फिर भी, जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं दोस्ती में जाति, धर्म, क्षेत्र भाषा आदि की समानता को कोई महत्व नहीं देता। मेरा जन्म भले ही उत्तर प्रदेश में हुआ हो, पर मेरा विकास राजस्थान में हुआ। इसलिए मैं स्वयं को उत्तरप्रदेशीय से अधिक राजस्थानी समझता हूँ और मेरे लिए एटा उतना महत्त्वपूर्ण नहीं, जितना अजमेर है। फिर मेरे दोस्तों में ब्राह्मण कम, दूसरी जातियों के लोग अधिक हैं, जिनमें से कई दलित और आदिवासी कहलाने वाले भी हैं। यहाँ तक की कई मुसलमान, ईसाई बौद्ध और जैन भी मेरे मित्र हैं। लेकिन शर्माजी को मेरा उपाध्याय उत्तर प्रदेशीय और एटा जिले का होना शायद ज्यादा महत्त्पूर्ण लगता था।

शर्मा जी और मैं उर्दू में हमजुल्फ और हिन्दी में साढू बने। 'ऊर्जा' तो नहीं निकल सकी, लेकिन एम. ए. की प्रथम श्रेणी और पत्रकारिता के अनुभव के आधार पर मुझे जल्दी ही दिल्ली में 'हिन्दी शंकर्स वीकली' में सहायक संपादक की नौकरी मिल गयी। उधर शर्मा जी अपनी दिल्ली वाली नौकरी छोड़कर पंतनगर विश्वविद्यालय की नयी नौकरी करने चले गये और हमने राणा प्रताप बाग वाला वही मकान किराये पर ले लिया, जिसमें शर्मा जी रहा करते थे। बाद में जब वे पंतनगर से वापस दिल्ली आ गये और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् की पत्रिका 'खेती' का संपादन करने लगे, तो उन्होंने पहले राणा प्रताप बाग में ही एक और मकान किराये पर लिया। इस प्रकार कुछ वर्षों तक मुझे शर्मा जी के निजी और पारिवारिक

जीवन को बहुत निकट से देखने का अवसर मिला।

तब से अब तक शर्मा जी की जिन्दगी में कई उतार-चढ़ाव आये हैं, जैसे आशाजी की मृत्यु, गीताजी से उनकी दूसरी शादी, फिर उनके बच्चों की शादियाँ, उनका नाना और दादा बनना, नौकरी में तरक्की करते हुए प्रधान संपादक के पद पर पहुँचना, शोधकार्य पूरा करके डॉक्टर रमेश दत्त शर्मा बनना और इस सबके साथ-साथ निरंतर लेखन करते हुए मूर्धन्य विज्ञान लेखक बनना, देश-विदेश की यात्राएँ करना इत्यादि। इस बीच हम दोनों रिश्तेदारी के बंधन में भले ही बँधे रहे हों, पर अपनी मित्रता में मुक्त रहे हैं। हमारे विचारों, हमारी मान्यताओं, हमारे सामाजिक सरोकारों और हमारी राजनीतिक प्रतिबद्धताओं में शुरू से ही अंतर रहा है, फिर भी हम मित्र बने रहे हैं, एक-दूसरे के सुख-दुख साझे करते रहे हैं और कभी-कभी हमप्याला भी होते रहे हैं।

शर्मा जी के कई मित्रों सहकर्मियों और सहयोगियों से मेरा परिचय है। उनमें से अनेक ऐसे हैं, जिन्हें शर्मा जी ने हिन्दी में विज्ञान लेखन के लिए प्रेरित किया है और निरंतर प्रोत्साहन देकर बनाया है।

निस्संदेह शर्मा जी अपने जीवन में एक सफल व्यक्ति हैं। सफलताएँ मुझे भी कम नहीं मिली हैं, लेकिन मेरा ध्यान सफलता से अधिक सार्थकता पर रहा। शायद इसीलिए मैं पत्रकारिता छोड़कर प्राध्यापक बना और विज्ञान लेखन छोड़कर मैंने साहित्यिक लेखन पर ही अपना ध्यान केन्द्रित किया। मैं चाहता, तो विज्ञान लेखन ही करता रह सकता था।

मैं अपने अनुभव से जानता हूँ कि हिन्दी में ज्यादातर विज्ञान लेखन वैज्ञानिक दृष्टि और चिंतन के अभाव में किया जाने वाला एक प्रकार का व्यावसायिक लेखन है, जो हिन्दी की पत्रकारिता की वक्ती जरूरतें पूरी करने के लिए किया जाता है और वह लेखक के अपने अनुभव तथा अनुसंधान के आधार पर नहीं, बल्कि पश्चिमी देशों से अंग्रेजी में छपकर आने वाली सुलभ सूचनाओं के आधार पर किया गया होता है। हिन्दी के ज्यादातर विज्ञान लेखक 'साइंस' और 'टेक्नोलॉजी' का फर्क भी नहीं समझते और तकनीकी आविष्कारों या उपकरणों की सतही सूचना देने वाले लेखों को भी विज्ञान लेखन में शुमार करते हैं। इतना ही नहीं, हिन्दी का विज्ञान लेखक प्रायः अपने किसी विषय का विशेषज्ञ नहीं, बल्कि 'सर्वज्ञ' होता है, जो विज्ञान की किसी भी शाखा से संबंधित किसी भी नये विषय पर धड़ल्ले से लिख सकता है।

निजी अनुभव, स्वतंत्र सोच, मौलिक चिंतन और वैज्ञानिक विश्व-दृष्टि रखने वाले कितने विज्ञान लेखक हैं हिन्दी में? और कितने हैं,जो विज्ञान का संबंध ज्ञान के अन्य अनुशासनों से जैसे दर्शन, इतिहास, अर्थशास्त्र समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि से जोड़कर अपने लेखन से पाठकों को कोई नयी अंतर्दृष्टि दे सकते हैं? असंबद्ध सूचनाओं के अंबार को तो विज्ञान नहीं कहा जा सकता। वैज्ञानिक विश्व-दृष्टि के अभाव के कारण ही हिन्दी के ज्यादातर विज्ञान लेखक जानकारी के स्तर पर तो नयी से नयी सूचनाओं से लैस रहते हैं,लेकिन अपने जीवन और व्यवहार में वैज्ञानिक दृष्टि अपनाने के बजाय अक्सर पुराने और पिछड़े हुए विचारों तथा अनेक प्रकार के अंधविश्वासों के शिकार होते हैं। राजनीतिक दृष्टि से देखें तो उनमें आधुनिक प्रगतिशील दृष्टि वाले लेखक कम मिलेंगे, रूढ़िवादी सोच के यथास्थितिवादी या प्रतिक्रियावादी लेखक अधिक। मैं ऐसे लेखकों की कतार का एक 'सफल लेखक' नहीं बनना चाहता था।

शर्मा जी इन विचारों को जानते हैं और कभी-कभी सही भी मानते हैं, लेकिन उनका स्वभाव है कि वे खुलकर बहस कभी नहीं करते और मतभेदों को सामने लाने से बचते हैं। शायद उन्हें लगता है कि वाद विवाद से संबंध बिगड़ते हैं और उनकी कोशिश यह रही है कि संबंध न बिगड़ें। शायद यही कारण है कि जहाँ विवाद की आशंका होती है, वे हँसने-हँसाने लगते हैं और बातों का रुख मोड़ देते हैं। तो उनके बारे में लिखे जा रहे इस लेख का समापन मैं भी उन्हीं के-से हल्के-फुल्के हास्य-व्यंग्य अंदाज में क्यों न करूँ?

शर्मा जी हिन्दी के मूर्धन्य विज्ञान लेखक हैं, लेकिन उनकी हार्दिक इच्छा है कि उन्हें साहित्यकार भी माना जाये। इसके लिए उन्होंने ढेरों कविताएँ लिखी हैं। कहानियाँ

शेष पृष्ठ 47 पर

मेरे 'वे'

श्रीमती गीता शर्मा

अभी आधी रात है। मैं मुड़कर देखती हूँ। पता नहीं वे कब उठ गये। छोटी लाइट जलाती हूँ। रात के तीन बजे होंगे। बगल में ही 'स्टडी रूम' है। पूरा कमरा किताबों से, कागजों से और फाइलों से भरा हुआ । बस, उनको ही पता है कि किस कोने में 'विज्ञान' मिलेगा, किस खाने में 'न्यू साइंसिस्ट' या 'आविष्कार' , या 'गरिमा-सिंधु' या 'विज्ञान प्रगति' या 'कृषि मंगल' या आई. सी. ए. आर. की वार्षिक रिपोर्ट या प्रो. स्वामिनाथन् और डॉ. अब्दुल कलाम की किताबें या फिर उनके अपने लेखों की फाइलें और अखबारों की कतरनें। हमने बहुत कोशिश कर ली, लेकिन यह कमरा फिर भर जाता है -चारों ओर कागज-ही-कागज। एक अलमारी सिर्फ उनके लेखों/किताबों से भरी पड़ी है। फिर एक में कृषि और विज्ञान पत्रकारिता का एक खाना है, एक बायोटैक्नोलाजी का, एक वैज्ञानिकों पर बनाई जा रही फिल्मों के लिए जुटाई गयी सामग्री का और एक स्वास्थ्य का, कृषि का, पर्यावरण का, और एक अंतरिक्ष वगैरह का। जब किसी विषय पर लिखने बैठते हैं, तो अपने काम की जानकारी इसी कमरे से जुटा ही लेते हैं। नहीं तो फिर दूसरा दिन लाइब्रेरियों में और वैज्ञानिकों के पास जाकर तथा इण्टरनेट से आवश्यक जानकारी जुटाने में गुजरेगा। इण्टरनेट से सामग्री जुटाने में अब बेटा अनुराग और बहू स्वाती भी मदद करने लगे हैं।

लोग कहते हैं कि रिटायर हो गये हैं। मुझे तो नहीं लगता। आज भी वही आधी रात उठ जाना। 3-4 घण्टे लगातार लिखना। फिर घण्टे भर आराम । फिर दिन भर की तैयारी। आज यहाँ मीटिंग, कल वहाँ सम्मेलन, परसों वहाँ व्याख्यान । इर्री (इण्टरनेशनल राइस रिसर्च इन्स्टीट्यूट) के लिए किताब लिख रहे हैं। उन लोगों ने छूट दे रखी है कि जब चाहो आ जाओ। अक्सर लंच के बाद ही जायेंगे। फिर मुझे दफ्तर से लेंगे और घर आ जायेंगे। रास्ते में किसी दिन मुझे शॉपिंग करनी पड़े,तो इनका मुँह देखो। ज्यादातर तो गाड़ी में ही बैठे रहेंगे - 'जाओ तुम खरीद लो।' कभी मेरा मन रखने के लिए चल पड़े तो बड़ी जल्दी इनका 'ब्रेक पॉइण्ट'आ जाता है। चाहते हैं कि जिस दुकान पर पहले घुस गये उसी से खरीद लो।

सुबह का टहलने का टाइम लिखने-पढ़ने में बीत जाता है। शाम का अखबारों की कतरनें लेने और 'सब टीवी' पर 'आफिस-आफिस' और 'पब्लिक है सब जानती है' जैसे व्यंग्य-प्रधान धारावाहिक देखने पर। आध्यात्मिक प्रवचन सुनना भी अच्छा लगता है। या फिर पोती 'सोना' के साथ बच्चा बन जायेंगे। वह भी हँसी उड़ा देती है, "दादा जी आपको कुछ नहीं आता।" शाम को लिखते नहीं। कहते हैं 'मेरी कलम पर सरस्वती प्रातः काल ही आती हैं। वे बोलती जाती हैं, मैं लिखता जाता हूँ।

पता नहीं कहाँ-कहाँ से ढूँढते-ढूँढते लोग आ जायेंगे। 'यह कल तक लिख दीजिए।' 'ये तीन लेख सुबह तक अनुवाद कर दीजिए।' 'इस फिल्म का प्रपोजल बना दीजिए।' 'इस फिल्म की स्क्रिप्ट लिख दीजिए।' किसी को 'ना' नहीं कहेंगे। मैं कहती हूँ कि क्यों इतना काम जमा कर लेते हो? तो बोलते हैं कि 'मेरे मित्र लोग इनको भेजते हैं। बड़ी उम्मीद लेकर ये सब आते हैं। प्रायः सब ओर से निराश होकर। फिर मैं भी इन्हें खाली हाथ लौटा दूँ। मुझसे यह नहीं होता।'

खाने-पीने का शौक अपने पिताजी से लगा है - खास तौर से चाट-पकौड़ी का। पर अब काफी एहितयात बरतते हैं। शाम को अक्सर फलाहार करके रह जायेंगे। कभी-कभी मैं जिद करूँगी तो 'बस एक चपाती खाऊँगा।' भोजन में नमक है या नहीं, अच्छा बना है या बुरा आज तक कभी शिकायत नहीं की। बीच में फेफड़ों की एक बीमारी सार्कोडिओसिस के लिए साल भर तक स्टेराइड लिया। फूल गये। चार जोड़ी कपड़ों के सिवा सब छोटे हो गये।

इनका संसार बहुत बड़ा है। रेडियो से दूरदर्शन तक, पत्र-पत्रिकाओं तक, चेन्नई से इलाहाबाद तक, दूर-

दूर तक फैला हुआ। दो बहिनें हैं - छोटी। दोनों दिल्ली में हैं। अक्सर रक्षाबंधन और भाईदूज पर भी उनके पास नहीं जा पाते। पर फोन पर ही मीठी बातें करेंगे, उन्हें बहला देंगे। कभी शिकायत नहीं करतीं। एक बार गये तो उसी में सब गिले-शिकवे धो डालेंगे। दो छोटे भाइयों में से बीच के गुजर गये। उनकी पत्नी पहले चली गयी। सात बच्चे थे उनके। छह बेटियाँ और एक बेटा। सब छोटे भाई ने पाले। उसका बड़ा आदर करते हैं। कहेंगे, 'वह तो लक्ष्मण है। मैं ही राम नहीं बन पाया। पुश्तैनी जमीन-जायदाद भी वही सँभालते हैं। कहते हैं, "हमें कुछ नहीं लेना। उस पर बड़ी जिम्मेदारियाँ हैं।" जो बन पड़ता है, करते हैं। एक बार पुश्तैनी घर की मरम्मत करवा दी। ऊपर एक कमरा बनवा दिया। दोनों भाइयों में खूब पटती है। सबको याद करते हैं। पर रिश्ते-नाते निभाने के लिए वक्त कहाँ है इनके पास। फिर भी सबके हर दिल अजीज हैं। शायद कोई जादू जानते हैं हर किसी को मोह लेने का। सब मित्र भी इन पर जान छिड़कते हैं।

457, हवा सिंह ब्लाक
खेलगाँव नई दिल्ली-110049

पृष्ठ 45 का शेष ......

भी लिखी हैं। रेडियो नाटक भी लिखे हैं। हास्य-व्यंग के लेख भी लिखे हैं और अपने विज्ञान लेखन में तो साहित्यिकता का पुट देने की कोशिश उन्होंने हमेशा की ही है। लेकिन हिन्दी का साहित्यिक समाज इतना नाशुकरा है कि उन्हें साहित्यकार नहीं विज्ञान लेखक ही मानता है। इधर शर्माजी की भी जिद है कि वे स्वयं को कम से कम कवि तो मनवाकर ही रहेंगे। वे कविताएँ लिखते ही नहीं, उन्हें गाकर सुनाते भी हैं। आवाज उनकी वैसे भी बुलंद है, पर कविता सुनाते समय भावावेश में और भी बुलंद हो जाती है। नतीजा यह होता है कि कविता चाहे श्रृंगार या करुण रस की ही क्यों न हो, वीर रस की मालूम होती है। अपनी बेटी अर्चना की शादी के मौके पर जो कविता उन्होंने सुनायी थी, वह इतनी मार्मिक थी कि उसे सुनाते समय वे स्वयं रो रहे थे, लेकिन उनके श्रोता हँस रहे थे।

107, साक्षरा अपार्टमेंट्स,ए-3,पश्चिम विहार,
नयी दिल्ली-110063

मेरे डैडी

कु॰ आस्था शर्मा

उनकी बेटी के नाते डॉ. शर्मा के बारे में सरल शब्दों में मैं इतना ही कह सकती हूँ कि विज्ञान-लेखन और विज्ञान-लोकप्रियकरण इत्यादि के क्षेत्र में अपनी समस्त उपलब्धियों के अतिरिक्त और इन सबसे ऊपर वे बड़े दिलचस्प व्यक्ति हैं जिनका ज्ञान बड़ा विस्तृत है। जीवन में उनके अनुभव से और उनसे कितना कुछ सीखा जा सकता है। अपनी व्यस्त दिनचर्या में से जब भी हम पिता-पुत्री के बीच वार्तालाप के कुछ क्षण आते हैं, तो मुझे लगता है कि मैं उन्हें अनंत काल तक सुनती रहूँ। वे मुझे जो भी बताते हैं वह बड़ा दिलचस्प होता है और चौंकाता है। यही बात उनके सम्पूर्ण विज्ञान-लेखन में भी झलकती है जिसे वे हर वर्ग के पाठकों के लिए बेहद दिलचस्प और सुबोध बनाकर परोसते हैं। फिर भले ही उनके पाठकों ने विज्ञान पढ़ा हो या न पढ़ा हो। उनके पाठक उनकी बात समझकर उसे ग्रहण कर लेते हैं, तो उनका उद्देश्य पूरा हो गया, क्योंकि हमेशा ही जो कुछ ज्ञान उनके पास है, उसे अपने आस-पास दोनों हाथ से लुटाने में तनिक भी नहीं हिचकते।

एक बेटी के रूप में मैंने बचपन से ही अपने पिता को सदैव किताबों और पत्र-पत्रिकाओं में डूबा हुआ देखा और उनसे समय और ज्ञान की कीमत सीखी। यह उनके स्वभाव का एक अभिन्न अंग है कि वे कभी खाली नहीं बैठते। समय काटना उनके लिए न पहले कभी समस्या था, और न आज। वे कोई बहुत पारिवारिक व्यक्ति हों, ऐसा नहीं कहा जा सकता, लेकिन जब भी हमें उनकी जरूरत होती है , तो हमने कभी उनकी अनुपस्थिति अनुभव नहीं की और मैं कह सकती हूँ कि उन्होंने हमारे हिस्से का समय काफी हद तक दिया।

बी फार्मा (द्वितीय वर्ष)
हमदर्द यूनिवर्सिटी,
हमदर्दनगर नई दिल्ली

मेरे बड़े भाई साहब : डॉ. रमेश दत्त शर्मा

श्रीमती लक्ष्मी पाठक

डॉ. रमेश दत्त शर्मा हम सभी दो बहिनों और तीन भाइयों में सबसे बड़े हैं। मेरे एक भाई का स्वर्गवास हो गया ।अब दो भाई और दो बहिन शेष हैं। मैं बहिनों में बड़ी और रमेश के बाद दूसरे नम्बर पर हूँ। भाई साहब का जन्म 15 फरवरी 1939 को हमारे पैत्रिक गाँव साँथा, तहसील जलेसर जिला एटा उत्तर प्रदेश में हुआ था। मैं भी वहीं गाँव में पैदा हुई थी लेकिन मेरी छोटी बहिन और छोटे भाई जब पैदा हुए थे तो हमारे पिता जी गाँव से पास ही जलेसर शहर में आ गये थे अतः भाई साहब का और मेरा लालन-पालन जलेसर तहसील के कस्बाई वातावरण में हुआ था।

घर में जब छोटे भाई बहिन पैदा नहीं हुए थे तब हम दोनों ही आपस में घर में और घर के बाहर खेला करते थे। हमारे खेलों में लड़के और लड़कियों के खेल अलग-अलग होते थे। भाई साहब लड़कों के साथ लड़कों वाले खेलों में कबड्डी आदि खेलते थे और मैं लड़कियों के साथ "छुई-छुआ" और "विष-अमृत" जैसे खेल खेलती थी । कोई सर पर हाथ रख देता और विष बोल देता तो बैठ जाते और कोई बैठे के सर पर हाथ रख कर अमृत कह देता तो उठकर भागने लग जाते थे। लेकिन घर में और बच्चे न होने से हम सभी भाई बहिनें यही खेल मिलजुल कर खेलते रहते थे। इनमें भाई साहब जीत जाते थे तो हम रूठ जाते थे। फिर रूठने मनाने का क्रम चलता रहता था। जब कुछ बड़े हो गये तो भाई साहब झूले में डण्डा बाँध कर हमारे साथ झूलते थे। जब शहर में लगे सर्कस को देख आते थे तो उसी की नकल करते हुए वे टाँगे डण्डे में फँसाकर हाथ छोड़कर उल्टे लटक जाते थे और इसी तरह झूले पर नाना प्रकार की अठखेलियाँ करते रहते थे।

बचपन में वे हम सभी भाई-बहिनों का ख्याल रखते थे और अपने बड़े होने की गरिमा बनाये रखते थे। हमारी माँ जब खाना बनाने रसोई में चली जाती थी तो फिर हमारे छोटे भाई अथवा बहिन को शौच आदि आ जाती थी तो रसोई छोड़कर बाहर आकर उनकी शौच आदि धुलाने का रिवाज खाना बनाने वाले पर लागू नहीं होता था। अतः इस कार्य के लिए मैं और भाई साहब ही शेष बचते थे। मुझे इस कार्य में घिन लगती थी सो मैं संकोच करती थी। भाई साहब मेरी मनोस्थिति समझकर मुझसे केवल पानी डलवाते थे और स्वयं छोटे भाई-बहिनों की शौच साफ करते थे और माँ को पता नहीं चल पाता था कि किसने क्या कार्य किया है। इस तरह वे मुझ पर डाँट पड़ने से बचाने के लिए हमेशा ढाल की तरह मेरी तरफदारी करते रहते थे।

हाँ एक बात जरूर थी, शहर में सिनेमाघर था, भाई साहब को पिक्चर देखने का शौक था, पिताजी से पैसे माँगने में डरते थे अतः मुझे आगे करके मुझसे ही पैसे मँगवाते थे और मैं पिताजी को चाचा जी कहती थी, जब भी मैं चाचा जी से पिक्चर के लिए पैसा माँगती तो चाचा जी समझ जाते थे कि रमेश मँगवा रहा होगा, और वे हम दोनों के लिए पैसे दे देते थे, फिर हम दोनों ही एक साथ पिक्चर देखने चले जाते थे। इस तरह बचपन से ही हम दोनों भाई बहिन एक दूसरे का पूरा-पूरा ख्याल रखते थे।

हम लोगों का बचपन बहुत ही लाड़-प्यार और मौज मस्ती का रहा था। हमारी नानी का घर भी जलेसर शहर में ही था अतः हम दोनों वहाँ भी एकसाथ चले जाते थे और खेल-कूदकर तथा खा-पीकर घर वापस आ जाते थे। नानी के घर को हम लोग 'पल्लेघर' बोलते थे और अपने घर को 'मल्लेघर' कहते थे जो आज भी हम लोग लगभग 60-60 वर्ष के हो गये हैं इसी नाम से पल्लेघर अर्थात्

नाना-नानी घर के आते जाते रहते हैं।

भाई साहब बचपन में मुझे साइकिल सिखाना चाहते थे अतः वे मुझे साइकिल पर बैठाकर खुद साइकिल पकड़कर चलाना सिखा रहे थे। तभी चाचा जी आ गये और भाई साहब को डाँट कर बोले कि रमेश यह क्या कर रहा है? अगर लक्ष्मी की साइकिल सीखने या चलाने में टाँग-वाँग टूट गयी तो लक्ष्मी लँगड़ी हो जायगी फिर कोई उससे शादी भी नहीं करेगा, इसलिए तू लक्ष्मी को साइकिल-वाइकिल मत सिखा। इसतरह मैं बुढ़ापे की उम्र में स्वयं अपने भार से ही ठीक से चल फिर नहीं पाती हूँ। तो भाई साहब चलने-फिरने के नये-नये तरीके बताते रहते हैं जिनसे मुझे आराम मिलता है।

ऐसे है मेरे अच्छे-अच्छे भाई साहब। भाई साहब बचपन में पढ़ने में भरपूर दिलचस्पी लेते थे। वे पढ़ने में अच्छे भी थे, साथ ही साथ खेल-कूद में भी खूब हिस्सा लेते थे। वहाँ शहर में खेले जाने वाले हर खेल में, चाहे वह घर के अन्दर खेलने के हों अथवा घर के बाहर खेलने के हों, दिलचस्पी रखते थे। वे बचपन में ही बालीबाल, बैडमिन्टन, कबड्डी तथा कैरम आदि के अच्छे खिलाड़ी हो गये थे।

मेरे भाई डॉ. रमेश दत्त शर्मा बचपन में दूसरों की नकल करने में बड़े माहिर थे। वे कभी कथावचक तो कभी महात्मा तो कभी साड़ी पहनकर औरत बन जाते थे और घर में खूब खेल-कूद करते रहते थे। कथा वाचक और महात्मा के रूप में वे बहुत अच्छी तरह समझा-समझा कर उपदेश देना सीख गये थे।

मेरे भाई साहब बचपन में जितने चंचल थे, आज उतने ही धीर-गंभीर हो गये हैं। आज वे कम बोलते हैं और कम ही सुनना चाहते हैं। ज्यादा लम्बी चौड़ी बातें पसंद नहीं करते हैं। उनका सारा समय चिन्तन और सार गर्भित लेखन में लगा रहता है। फिर भी भाई बहिन के संबंध को बखूबी निभाते हैं। चाहे कितनी ही परेशानी में क्यों न हो वे रक्षा बंधन और भाई दूज पर अवश्य आते हैं।

सी-4-एच/56
जनकपुरी
नई दिल्ली-10058

'आर डी मय' की मय का नशा

कुलदीप शर्मा

लोकप्रिय विज्ञान लेखन के लिए जीजाजी ने मुझे ही नहीं और भी कई लोगों को प्रोत्साहित किया है। मेरे प्रिय साथी डॉ.जगदीप सक्सेना, डॉ.मनोज पटेरिया, श्रीमती गीता शर्मा, डॉ.दुर्गेश शर्मा, श्री हरि विश्नोई आदि प्रमुख नामों में हैं। सच पूछिए तो लोकप्रिय विज्ञान लेखन के भीष्म पितामह हैं। कई विज्ञान लेखकों ने उनकी शैली अपनाई भी। मुझे अपना पहला वैज्ञानिक लेख याद है जिसे मैने उन्हीं की शैली में लिखा था। वर्ष 1968 में छपे इस लेख का शीर्षक था 'चमत्कार विद्युत के'। शुरुआत कुछ यों थी - पतंग उड़ाना भला किसे अच्छा नहीं लगता, मगर जब बारिश हो रही हो, बिजली चमक रही हो ऐसे में भला पतंग कौन उड़ाये। रिमझिम बारिश और बिजली की गड़गड़ाहट के बीच पतंग उड़ाई एक वैज्ञानिक ने और कैद की बिजली। लेख पढ़कर जीजाजी ने पीठ थपथपाई और बोले 'विज्ञान लेखन की डोर यों ही थामे रहो, एक दिन लेखन के आसमान में अच्छी पतंग साधोगे'। अब किस हद तक उनकी आकांक्षाओं में मैं खरा उतरा हूँ कह नहीं सकता मगर यह तय है कि विज्ञान लेखन की पतंग उड़ा रहा हूँ। बिना किसी से छुड़ी लिए या चरखी थमवाये। साथी मनोज पटेरिया अक्सर कहते हैं 'आप लाबिंग नहीं करते, एकला चलो के प्रेमी हैं।' सच कहते हैं मनोज भाई, 'सब कुछ सीखा हमने न सीखी यही होशियारी'। वाकई इस फ्रंट पर हैं हम अनाड़ी। पर अंदर से खुश हैं।

मैं अपने लेखन का वो दौर नहीं भूलता जो मैंने जीजा के घर रहकर किया।

संपादक 'खेती'
कृषि भवन
नई दिल्ली

चुलबुली बहन के लक्ष्यभेदी भाई

श्रीमती निर्मलेश आमोरिया

हम लोग तीन भाई दो बहिन थे । मँझले भाई असमय मृत्यु को प्राप्त हो गये। अब दो भाई और दो बहिन हैं। बड़ी बहन बड़ी प्यारी है, निश्छल, उदारता की प्रतिमूर्ति। हम सब भाई बहनों में निःस्वार्थ प्यार एवं अपनापन है जो जीवन के अनेक उतार-चढ़ाव के मध्य अडिग है।

मेरे भाई साहब मुझे शैतान चुलबुली बहिन समझते रहे हैं और जीजी को धीर गम्भीर । मैं अपने भाई साहब की होशियारियों को अच्छी तरह ताड़ लेती थी। अब भी मैं उनके अभिनय और वास्तविकता को भली-भाँति जान लेती हूँ।

ससुराल पक्ष को जहाँ समुन्नत किया वहीं हम लोगों की भी उपेक्षा नहीं की। सबसे बड़ी विशेषता है कि कभी अपना आपा नहीं खोते हैं। हर समस्या का समाधान सहज होकर करते हैं। मुस्करा कर बात करते हैं, आपको पता ही नहीं चलेगा, आपकी मानसिकता को भाँपकर आपके मनोनुकूल ही बात करेंगे। इसीलिए जहाँ भी जाते हैं छा जाते हैं।

कविता लिखना और कला चित्र बनाना भी भाई साहब का बहुत बड़ा शौक है। जब भाई साहब राणा प्रताप बाग, नई दिल्ली में रहते थे तब मैं पाँचवी या छठी क्लास में थी, पिता जी और मैं भाई साहब के पास आये थे। भाई साहब का एक कमरा किताबों और डायरियों से भरा रहता था। पिता जी ने एक डायरी उठाकर पढ़ना शुरू किया तो पढ़ते रहे, खुश होते रहे लेकिन थोड़ी ही देर बाद अचानक भाई साहब को डाँटने लगे कि बच्चन और नीरज मत बनो, जो तुम्हारा विषय है वनस्पतिशास्त्र, उसी में लिखो। पता नहीं तभी से दुरूह विज्ञान को सहज भाषा में लिखकर जन साधारण तक पहुँचा दिया। यह कार्य आज तक जारी है।

हमारे पिता जी जैसा चाहते थे भाई साहब ने उससे कहीं ज्यादा मेहनत करके अपने को दिल्ली जैसे महानगर में स्थापित किया है, और विज्ञान लेखन के द्वारा नये-नये अनुसंधानों को जन-जन तक पहुँचाया है, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, दूरदर्शन, रेडियो आदि द्वारा। यह क्रम अपने देश तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि विदेशों में भी नये-नये अनुसंधानों को कार्यरूप दिया। इन सब बातों से जो भी अवगत हैं उनको तो ये बातें कुछ नयी सी नहीं लगेंगी पर हम लोग अपने परिवार में जब सब बैठते हैं तो अभिभूत होते हैं। प्रेरक प्रसंग के रूप में भाई साहब के जुझारूपन और 'एकला चलो' के विचारों से बच्चों को उत्साहित करते रहते हैं।

7,सावरकर अपार्टमेंट
पटपडगंज, नई दिल्ली-92
फोनः 011-22770105

बच्चन जी ने मुझे विज्ञान लेखक बनाया

डॉ० रमेश दत्त शर्मा

जब सन् 1959 में वनस्पतिविज्ञान की शब्दावली बनाने के लिए मैं केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के अनुसंधान सहायक के पद पर चुना गया, तो, यू.पी.एस.सी. में मेरा इंटरव्यू लेने वालों में कथाकार जैनेन्द्र जी के साथ-साथ कविवर बच्चन जी भी शामिल थे। ये दोनों साहित्यकार निश्चय ही इससे प्रभावित हुए होंगे कि विज्ञान का विद्यार्थी जैनेन्द्र जी के उपन्यास "सुनीता" और बच्चन ही की अमर काव्य कृति "मधुशाला" के बारे में जानता है। 'मधुशाला' तो उन दिनों मुझे लगभग पूरी कंठस्थ थी। बल्कि उसके फ्लैप पर मैंने उसी छंद के कुछ तुकबंदियाँ कर डाली थीं जो हॉस्टल में कोई जलनखोरा ले उड़ा। मुझे एम.एस-सी. पास किये मुश्किल से दो-तीन महीने बीते थे और इंटरव्यू देने मुझसे वरिष्ठ और अनुभवी 10-12 लोग आये थे। मुझसे बच्चन जी ने अन्य रुचियों के बारे में पूछा तो मैंने बैडमिंटन, बालीबाल तथा टेबिल टेनिस में दिलचस्पी का जिक्र किया। उन्होंने पूछा कि "अच्छा तो हमारी बैडमिंटन की टीम का क्या हाल है?"

"वे सेमी-फाइनल में पहुँच गये हैं", मैंने बताया। उन दिनों नन्दू नटेकर बैडमिंटन के चैम्पियन थे और बैंकाक में मैच खेल रहे थे। बस, मैं चुन लिया गया। दिल्ली आ गया। मैं कविताएँ लिखता था। निदेशालय में तीसरे तार सप्तक के कवि श्री श्याम मोहन श्रीवास्तव (अब स्वर्गीय) तथा श्री जगदीश चतुर्वेदी का तथा अनेक कथाकारों तथा साहित्यकारों का उन दिनों अच्छा संगम था अतः मैं पूरी तरह से कवि से रूप में अपनी पहचान बनाने में जुट गया। गोष्ठियों में और मंचों में कविता-पाठ करने लगा। कुछ कविताएँ प्रकाशित भी हुईं।

एक बार शरद-पूर्णिमा पर मैंने स्वयं दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थानीय शाखा की ओर से राणाप्रताप बाग में कवि सम्मेलन का आयोजन किया, तो उसकी अध्यक्षता करने के लिए बच्चन जी तैयार हो गये। मैं विलिंग्डन क्रीसेण्ट स्थित उनकी कोठी पर उन्हें लेने गया, तो रास्ते में टैक्सी में उन्होंने मुझसे मेरे बारे में पूछताछ की। मैंने यू. पी. एस. सी. के इण्टरव्यू की घटना बताई और उन्हें धन्यवाद दिया कि मुझे आपने ही चुना था। जब बच्चन जी को पता लगा कि मैं विज्ञान का अध्येता हूँ तो उन्होंने मुझे सलाह दी और बोले, "देखो रमेश! हिन्दी में कवियों की कोई कमी नहीं है तुम विज्ञान जानते हो, इसलिए विज्ञान लिखो।"

बस मैंने उनकी बात गाँठ बाँध ली और पूरा ध्यान विज्ञान लेखन पर लगाकर स्वयं को कवि के रूप में स्थापित करने का इरादा छोड़ दिया। आज मैं भारतीय विज्ञान लेखक संघ का अध्यक्ष हूँ और हिन्दी के विज्ञान साहित्य की सेवा के लिए अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित हो चुका हूँ - इस सबका श्रेय श्रद्धेय बच्चन जी को ही है। उन्होंने बाद में आगरा से प्रकाशित विज्ञान की मासिक पत्रिका 'विज्ञान लोक' को दिये गये अपने संदेश में भी नवयुवकों को यह सलाह दी थी कि जिन्हें विज्ञान आता है, वे विज्ञान लिखें, क्योंकि हिन्दी में विज्ञान साहित्य की कमी है।

मैंने बच्चन जी के कहने पर कवि बनने का इरादा छोड़ दिया था, लेकिन कविता फिर भी नहीं छूटी। जब तब फूट ही पड़ती है। जैसे कि उनके निधन की खबर सुनने के बाद श्रद्धांजलि के रूप में 'मधुशाला' की तर्ज पर ये पंक्तियाँ लिखने के बाद ही सो पाया :

" सबके सब रह गये ताकते,
लिए हाथ खाली प्याला।
जिसने रस की धार बहाई,
बंद कर गया मधुशाला।
शेष रह गयी सुधियाँ
ही बस उमड़ रहीं,
भर लातीं नयनों की
कोरों में खारी हाला।"

अध्यक्ष, भारतीय विज्ञान लेखक संघ
457 हवा सिंह ब्लॉक, खेल गाँव
नई दिल्ली-110049

जिसके लेखकों की पूरी की पूरी पीढ़ी उपेक्षित है

डा० रमेश दत्त शर्मा

हिन्दी साहित्य का शायद ही कोई इतिहासकार होगा, जिसने हिन्दी में विज्ञान साहित्य की कमी का रोना न रोया हो, और हिन्दी का शायद ही कोई साहित्यकार, पत्रकार या अखबार होगा जिसने, नयों की बात जाने दें, उन मौन-मनीषियों की भी कभी भूल से चर्चा की हो, जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन हिन्दी में विज्ञान साहित्य की अभिवृद्धि में लगा दिया। नौकर को डूबने से बचाने के प्रयत्न में स्वयं को लहरों की भेंट चढ़ाने वाले स्व. डॉ. गोरखप्रसाद के लिए आखिरकार इलाहाबाद के 'विज्ञान' को ही विशेषांक निकालना पड़ा।

डॉ. गोरखप्रसाद और डॉ. सत्यप्रकाश, इस द्विमूर्ति ने प्रयाग में विज्ञान परिषद के उन्नयन और 'विज्ञान' तथा 'अनुसंधान पत्रिका' के प्रकाशन से लेकर दर्जनों पुस्तकों के लेखन और संपादन तक कितने ही काम किये, जिन्होंने वस्तुतः हिन्दी में विज्ञान-साहित्य की आधारशिला रखी। पिछले दिनों राजधानी में डॉ. सत्य प्रकाश की एक नई विज्ञान पुस्तक प्रधानमंत्री श्री शास्त्री जी को भेंट की गयी। तब उस खद्दरधारी मूर्धन्य विज्ञानलेखक ने निश्छल हास्य बिखेरते हुए मुझसे कहा था - 'सठिया रहा हूँ, अब तो, साठ का हो रहा हूँ।' कैसी विडम्बना है कि हिन्दी का इतना तपस्वी साधक स्वयं ही हमें बताये कि "साठ का हो रहा हूँ।"

इसी तरह हिन्दी के भौतिक विज्ञान साहित्य की नींव रखने वाले डॉ. सेठी भी कब साठ को पार कर गये, कब सत्तर के हुए हमें नहीं पता। डॉ. निहालकरण सेठी माध्यमिक कक्षाओं से स्नातक स्तरीय तक भौतिकी संबंधी अनेक पुस्तकों के लेखक हैं, अनेक मानक पुस्तकों के अनुवादक हैं, सारे के सारे भौतिक विज्ञान संबंधी पारिभाषिक शब्द एक तरह से उनकी ही देन हैं। आजकल "वैज्ञानिक शब्दावली आयोग" के कार्यकारी अध्यक्ष हैं, कुछ दिन हुए उनके निर्देशन में 'खामख्वाह का निर्देशन नहीं, हर शब्द उनकी कलम से गुजरा है -"वैज्ञानिक-शब्दावली" का प्रथम भाग प्रकाशित हुआ है, जिसमें भौतिकी, रसायन, गणित, वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान, भू-विज्ञान और भूगोल, इन सात विषयों को शमिल किया गया है। मौलिक लेखन और वैज्ञानिक अनुवाद का उनका कार्य निरंतर चलता रहा है। भौतिकी का एक परिभाषा-कोश भी जल्दी ही प्रकाशित हो रहा है, जिसकी पांडुलिपि का हर पृष्ठ डॉ. सेठी की कलम से रँगा पड़ा है। (और उनका जन्म 8 जुलाई 1893 को हुआ था।)

नीरद प्रकाशन, काशी के किन्ही श्री "वनाश्या" ने एक पुस्तक प्रकाशित की है "साहित्यिक वैज्ञानिक श्री फूलदेव सहाय वर्मा।" तीस से अधिक वैज्ञानिक पुस्तकों के लेखक श्री फूलदेव सहाय वर्मा, सन् 1951 में बनारस विश्वविद्यालय से अवकाशप्राप्त कर चुके हैं, किन्तु विज्ञान लेखन से अवकाश नहीं ग्रहण किया। आजकल "हिन्दी-विश्वकोश" के सम्पादन मंडल में हैं।

इंजीनियरिंग इन्स्टीट्यूट के जर्नल में हिन्दी का भी खण्ड प्रकाशित होता है। प्रतिवर्ष प्रकाशित लेखों में से सर्वश्रेष्ठ लेख लिखने वाले इंजीनियर को पुरस्कृत किया जाता है। अंग्रेजीदाँ इंजीनियरों के गहरे विरोध के बावजूद इंजीरियरिंग साहित्य को हिन्दी में लाने की प्राणपण से चेष्टा में लगे श्री ब्रजमोहन बड़े भाग्यवान हैं कि आगरे के साहित्यकार डॉ. हरिशंकर शर्मा ने उनके व्यक्तित्व और

कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए कुछ समय पहले (शायद) 'विशाल भारत" में एक लेख लिखा था।

उत्तर प्रदेश की बोर्ड की एक हाई स्कूल की परीक्षा में हिन्दी प्रश्न पत्र में गतवर्ष एक सवाल था - प्रो. भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में। मेरा ख्याल है कि यह प्रश्न मैट्रिक के स्तर का नहीं था, इसका उत्तर तो भले-भले आचार्य भी नहीं लिख पायेंगे। जिस कमरे में स्वयं प्रो. श्रीवास्तव निरीक्षक थे,उसके विद्यार्थियों के सामने तो उस प्रश्न का उत्तर साक्षात खड़ा था। कम से कम वे इतना तो लिख ही सकते थे कि प्रो. भगवती प्रसाद श्रीवास्तव छरहरे बदन के हँसमुख और विनम्र व्यक्ति हैं, बुशशर्ट और पैंट पहनते हैं, बाल कुछ-कुछ सफेद हो चले हैं, बाकी बातें तो हर हिन्दी के विद्यार्थी को आचार्यों की कृपा से ऐसी याद रहती हैं कि किसी भी साहित्यकार पर फिट की जा सकें। धर्म समाज कालेज, अलीगढ़ में अध्यापकी करने वाले इस भौतिकी लेखक का पहला लेख 'विशाल भारत" में छपा था, जब बनारसीदास चतुर्वेदी उसके संपादक थे। लेख का शीर्षक था -'विज्ञान और धर्म", तब से लेखों और वार्ताओं का बेशुमार सिलसिला, मौलिक और अनूदित पुस्तकें, संपादन, फिर भी यह व्यक्तित्व नितांत अपरिचित है, हमारे लिए।

प्रो. श्रीवास्तव के ही समवयस्क हैं श्री रामचन्द्र तिवारी, "हंस" के जमाने से लिखते आ रहे हैं। वार्ताएँ, वैज्ञानिक लेख, पुस्तकें। साथ ही कहानीकार और उपन्यासकार भी हैं। पिछले दिनों मिले तो थके-थके से स्वर में बोले-"भाई, विज्ञान अब हिन्दी में तो लिखूँगा नहीं, उपन्यास (सुभद्रा) आ गया है, और भी कई बहुत दिनों से अधूरे पड़े हैं।" मैं क्या कहता। तिवारी जी सन् 52 से "विज्ञान-प्रगति" का संपादन करते रहे हैं, पत्रिका का प्रारम्भ ही उनसे हुआ।

"विज्ञान-प्रगति" के वर्तमान प्रधान संपादक श्री ओमप्रकाश शर्मा, विज्ञान लेखकों की नयी पीढ़ी के अग्रज हैं। पहले 'खेती' सँवारते रहे, कुल मिलाकर 200 पुस्तकें होंगी,पचास से पाँच सौ पृष्ठों की। एक वैज्ञानिक उपन्यास भी "महामानव और मंगलयात्रा"। पिछले दिनों ही "भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक शब्दावली पर अनुसंधान कार्य पूरा किया है। "वेल्थ ऑफ इण्डिया" सीरीज के अनुवाद का भी समारम्भ ओमप्रकाश जी ने कर दिया है। पिछले दिनों "विज्ञान प्रगति" के बाल विशेषांक और नेहरू-विशेषांक की बड़ी चर्चा रही, किन्तु स्वयं ओमप्रकाश, हिन्दी जगत के लिए आज भी अँधेरे में ही हैं।

इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद सरकार से प्राप्त आर्थिक सहायता के बल पर एक पत्रिका निकाल रहा है। "विज्ञान-जगत" जिसके जन्मदाता और प्रधान संपादक हैं प्रो. आर.डी. विद्यार्थी। हिन्दी में उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिए वनस्पति-विज्ञान और प्राणि-विज्ञान की पुस्तकों के धुरंधर लेखक के रूप में विद्यार्थी जी पर्याप्त ख्याति अर्जित कर चुके हैं। धेला-टका लिए बिना तमाम कठिनाइयों के बावजूद 'विज्ञान जगत' निकाल रहे हैं, और अच्छा निकाल रहे हैं।

उन्हीं का आइडिया था "विज्ञान लोक' जिसकी बागडोर कुछ दिनों उनके हाथों में, फिर प्रो. श्रीवास्तव के हाथ में और अब उसके प्रकाशक स्वयं श्री शंकर मेहरा के हाथ में है। अवैज्ञानिक हाथों के दागों को अनदेखा कर दें तो "विज्ञान-लोक" काफी लोकप्रिय हो रहा है। वैसे बच्चों के लिए एक अच्छी वैज्ञानिक पत्रिका का हिन्दी में अभी अभाव ही है। श्री ओमप्रकाश शर्मा पूरा समय दे पाते तो "विज्ञान प्रगति" अपने नये रूप में इस कमी को दूर कर देती।

बच्चों का कार्यक्रम रेडियो पर भी होता है। इसमें विज्ञान के जो फीचर डॉ. एच. एस. विश्नोई दे रहे हैं, कई वर्षों से, उनका कोई मुकाबला नहीं है। बच्चों के लिए लिखी पुस्तक "मोती का पेड़" सहज ही बच्चों के विज्ञान साहित्य की मानक मानी जा सकती है। आकाशवाणी से टेलीविजन कार्यक्रम प्रसारित होने की बात अभी एक खबर सी ही लगती है, लेकिन डॉ. विश्नोई पहले वैज्ञानिक हैं, जिन्होंने हिन्दी में टेलीवीजन पर बच्चों के लिए जीव-जंतुओं के बारे में बड़े सुन्दर कार्यक्रम प्रस्तुत किये।

आजकल वे दिल्ली विश्वविद्यालय के अनुवाद निदेशालय में प्राणि विज्ञान संबंधी अनुवाद कार्य के संयुक्त निदेशक हैं और स्वयं उनके द्वारा अनूदित चार-पाँच पुस्तकें जल्दी ही प्रकाशित होने वाली हैं।

"हाइड्रोजन बम क्या है " इस शीर्षक से 50-51की जनसत्ता में, एक सुललित लेखमाला के द्वारा हाइड्रोजन बम की विध्वंसक शक्ति के वैज्ञानिक रहस्य को उद्घाटित करने वाला व्यक्तित्व कहानीकार के रूप में जाना जाता है, लेकिन कितने लोग जानते हैं कि उत्तर प्रदेश सरकार ने उसकी जिस कहानी पुस्तक को पुरस्कृत किया था, वह थी "विज्ञान की कहानियाँ" । इसके लेखक मनमोहन "सरल" ने पहली बार विज्ञान लेखन को साहित्यिक गरिमा दी। उनका वैज्ञानिक उपन्यास "पृथ्वी का अंत" प्रतीक्षित है।

अमेरिका में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान-पत्रकार सम्मेलन में हिन्दी अर्थात् भारत का प्रतिनिधित्व करने वाले हरीश अग्रवाल, "वाशिंगटन से लगभग 1,000 मील दूर नैसर्गिक सौन्दर्य के प्रतीक हरीतिमामय दक्षिणी राज्य, फ्लोरिडा स्थित केप-केनेवेरल के" "भूगर्भस्थ ऐन्द्रजालिक यंत्रालय" का आँखों देखा हाल देने वाले प्रेमसागर वर्मा, वैज्ञानिक अनुवाद के आचार्य श्री देवेन्द्रकुमार, वैज्ञानिक उपन्यास-लेखक डॉ. नवल बिहारी मिश्र, जीव जगत के परिचायक श्री सुरेश सिंह, वनस्पति लेखक श्री रामेश वेदी, डॉ. सुरेन्द्रनाथ गुप्त, डॉ. भानुशंकर मेहता, डॉ. पद्माकर द्विवेदी, विज्ञान संपादक डॉ. शिवगोपाल मिश्र, यूनेस्को से कई बार पुरस्कृत विज्ञान पुस्तकों के लेखक श्री रमेश चन्द्र "प्रेम", उभरती हुई नयी पीढ़ी-प्रयोगशील प्रेमानन्द चंदोला, शैलीकार कृष्णकुमार गुप्त, डॉ. रामकिशोर द्विवेदी, कुलदीप चड्ढा, डॉ. हर्ष प्रियदर्शी, शमीम अहमद इत्यादि, और सबसे अलग हटकर "भगीरथ" । "भगीरथ" नाम से विज्ञान-गंगा में गोता लगवाने वाला और कोई नहीं, आपका जाना पहचाना कहानीकार मनहर चौहान है। सूची बेहद अधूरी है; डॉ. राम विलास शर्मा ने बताया था कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के जमाने से लोग विज्ञान पर लिखते आ रहे हैं ....।

व्यक्तित्व-कृतित्व का यह भंडार मूल्यांकन के लिए अरौंदा पड़ा है। इनमें से कितने ही चाहते तो अंग्रेजी में भी लिख सकते थे और लोकविज्ञान लेखन पर दिये जाने वाले कलिंग पुरस्कार के प्रथम एशियाई विजेता श्री जगजीत सिंह की भाँति अँतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत को गौरवान्वित कर सकते थे। मैं डर रहा हूँ कि डॉ. सत्य प्रकाश को, अभी अभी प्रकाशित हुआ अपना महान ग्रन्थ 'फाउंडर्स ऑफ साइन्सेज इन एंसिएन्ट इंडिया" अंग्रेजी में क्यों लिखना पड़ा? जबकि इसके समर्पण समारोह में प्रो. हुमायूँ कबीर से लेकर दिल्ली के वर्तमान चीफ कमिश्नर श्री विश्वनाथन तक, सभी लोग हिन्दी में बोले। इस अवसर पर डॉ. सत्यप्रकाश की पुस्तक को उनके सहपाठी कैबिनेट सेक्रेटरी श्री धर्मवीर के हाथ से ग्रहण करने के बाद प्रधानमंत्री श्री शास्त्री जी ने कहा था -"सत्यप्रकाश जी शांति से काम करने वाले, खामोश, मौन साधक हैं। जबकि जमाना यह है कि कोई शोर ना मचाये तो समझा जाता है कि काम हो रहा है।"

निदेशक तथा प्रधान संपादक ,
कृषि सूचना तथा निदेशालय,
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा नई दिल्ली।

डॉ. शिवगोपाल मिश्र द्वारा विज्ञान परिषद् प्रयाग महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद -211002 के लिए सम्पादित, मुद्रित एवं प्रकाशित। इण्डियन ऑफसेट प्रिन्टर्स , केला भवन 136 विवेकानन्द मार्ग, इलाहाबाद में मुद्रित

इंदिरा गांधी स्मृति पुरस्कार ग्रहण करते डॉ० शर्मा

राष्ट्रपति डॉ० शंकर दयाल शर्मा से डॉ० आत्माराम पुरस्कार ग्रहण करते डॉ० शर्मा

'नवनीत' के पूर्व सम्पादक
ी नारायण दत्त जी के साथ डॉ० शर्मा
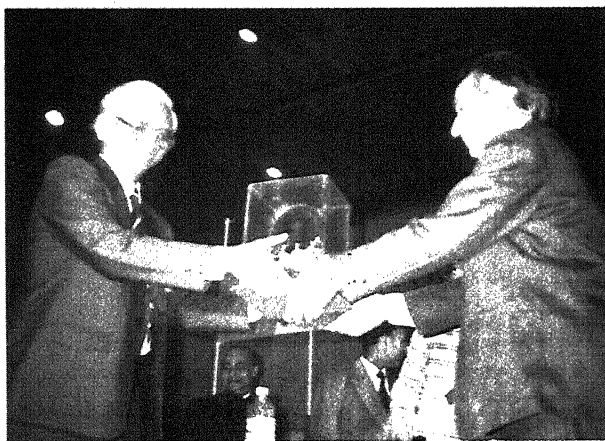
भारत सरकार का विज्ञान लोकप्रियकरण राष्ट्रीय पुरस्कार ग्रहण करते डॉ० शर्मा

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्व महानिदेशक डॉ० आर० एस० परौदा और उनकी पत्नी श्रीमती शशि परौदा के साथ डॉ० शर्मा, उनकी पुत्री आस्था और पत्नी श्रीमती गीता शर्मा

अपनी पुत्री अपर्णा और दामाद हेमन्त पंत के साथ डॉ० शर्मा

डॉ० शर्मा की माता स्व० श्रीमती राम दुलारी